अध्याय 1

क़ानून और आपका रोज़मर्रा का जीवन

शुरुआत

हम क़ानून क्यों पढ़ते हैं? ज़्यादातर लोग क़ानून इसलिए पढ़ते हैं ताकि वे क़ानून के क्षेत्र में एक पेशेवर तरीक़े से काम कर सकें | जैसे कि वे वक़ील बनने के लिए, या फिर क़ानून पढ़ाने के लिए क़ानून की पढ़ाई करते हैं | वहीं कुछ दूसरे लोग क़ानून के बारे में कुछ सवालों में दिलचस्पी की वजह से क़ानून को लेकर शोध करते हैं | कुछ लोगों की दिलचस्पी नीतियों को बदलने या राजनेताओं के रूप में सरकार का हिस्सा बनने में भी होती है | लेकिन मान लीजिए कि हम इनमें से कुछ भी नहीं बनना चाहते हैं | या मान लीजिए कि हमें यह मालूम न हो कि ये चीज़ें कैसे की जाती हैं | अगर ऐसा है तब भी क्या क़ानून के बारे में पढ़ने, सोचने और सुनने का कोई मतलब है? और अगर हम ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहते हैं, तब क़ानून के बारे में सोचने का सही वक़्त क्या है?

रूबी की ही बात लीजिए |

रूबी 14 साल की एक मेहनती लड़की है | वह परंपरागत रूप से जंगल में रहने वाले एक आदिवासी समुदाय से आती है | स्कूल में जाकर पढ़ाई करने वाली अपने समुदाय की वह पहली लड़की है | गाँव के बड़े-बुज़ुर्ग लोग कुछ महत्वपूर्ण लगने वाले दस्तावेज़ों को पढ़ने और समझाने के लिए उसको बुलाते हैं | हाल ही में उनके राज्य में उच्च न्यायालय ने कुछ दिशानिर्देश जारी किए, जो कुछ जंगली इलाकों को हाथी गलियारा बनाने को लेकर थे | इन दिशानिर्देशों का असर व्यावसायिक रूप से चलने वाले होमस्टे और रिज़ॉर्टों पर पड़ने वाला है, जिनकी संख्या बढ़ रही है | समुदाय इन दिशानिर्देशों को समझना चाहता था | वे इस संदर्भ में अपने अधिकारों की सीमा भी जानना चाहते थे | नन्हे बच्चे ख़ास कर उत्साहित थे क्योंकि इसका मतलब यह था कि उन्हें अपनी खुली जगहें वापस मिल सकती थीं, जो उनके लिए अनमोल थीं | रूबी ने अपने दोस्त के अंकल के ज़रिए इस फ़ैसले की एक प्रति हासिल कर ली, जो उच्च न्यायालय में वकालत करते हैं | लेकिन फैसला 60 पन्नों में था जिसकी भाषा इतनी जटिल थी कि उसके लिए यह समझ पाना मुश्किल था कि असल में दिशानिर्देश क्या थे | रूबी को यह जान कर बड़ी उदास हुई कि जहां वह रहती थी, उस इलाक़े के बारे में अदालत ने जो कुछ कहा था उसे वह समझने में नाकाम थी | उसे अपने समुदाय की मदद नहीं कर पाने को लेकर हताशा भी महसूस हुई |

कानून और उसकी भाषा से इतनी अलग-थलग महसूस करने वाली रूबी अकेली नहीं है। जो भी चीज़ें हमें प्रभावित करती हैं, उन चीज़ों के ब्योरों और नतीजों को जानना-समझना हम सबके लिए संभव होना चाहिए। अगले कुछ पन्नों में आप रूबी जैसे और लोगों से मिलेंगे। आपकी मुलाक़ात मनोज से होगी जो संघर्ष के बाद अदालतों से अपने समुदाय के लिए फसल बीमा के रूप में राहत हासिल करने में कामयाब रहे। आप एक पुरस्कृत युवा फ़ोटोग्राफ़र सलीम से मिलेंगे, जिन्हें एक आंदोलन के फ़ोटोग्राफ़ लेने के अपने पेशेवर काम के दौरान अधिकारियों से उलझना पड़ गया। आप ध्रुविका से भी मिलेंगे, जो पैसों की जालसाजी का शिकार बनीं और उसके बाद आपराधिक कानूनी प्रक्रियाओं के भूलभुलैयों में दाखिल हुईं।

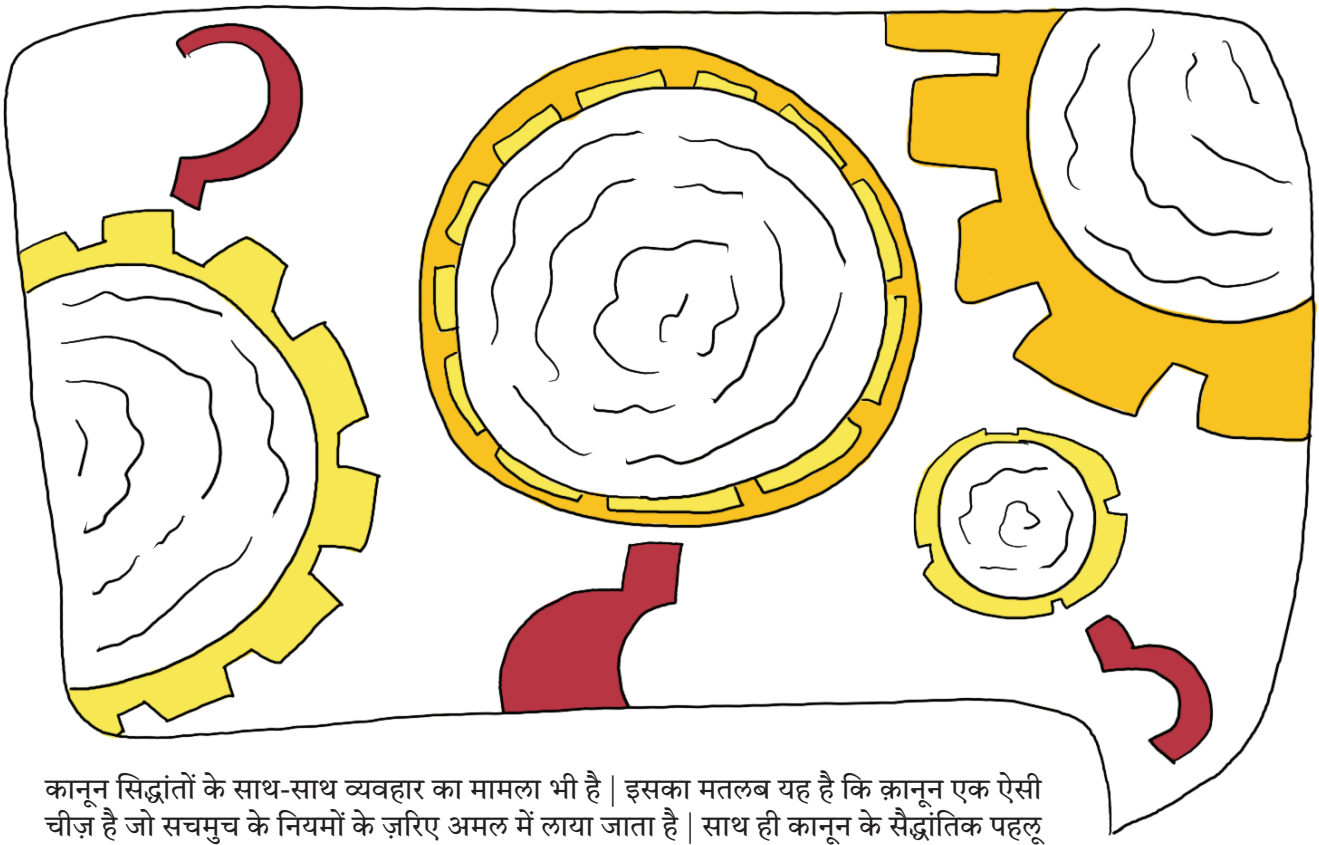

कानून सिद्धांतों के साथ-साथ व्यवहार का मामला भी है। इसका मतलब यह है कि क़ानून एक ऐसी चीज़ है जो सचमुच के नियमों के ज़रिए अमल में लाया जाता है। साथ ही कानून के सैद्धांतिक पहलू भी होते हैं। यानी अमल में लाए जाने वाले नियमों को जिन तर्कों और आधारों पर बनाया जाता है, वे इन्हीं सिद्धांतों से निकलते हैं। जैसे कि, क़ानून में बिना इजाज़त के किसी की निजी संपत्ति, जैसे कि घर, दुकान या ज़मीन में घुसने पर पाबंदी होती है। अगर आप ऐसा करेंगे तो ग़ैरक़ानूनी तौर पर घुसने के अपराध में आपको सज़ा हो सकती है। इस मनाही के पीछे सिद्धांत यह है कि आवाजाही की आपकी आजादी वहाँ ख़त्म हो सकती है, जहाँ किसी दूसरे की संपत्ति की सुरक्षा का अधिकार शुरू होता है। क़ानून भले ही इन दोनों चीजों को साथ मिला कर बनता है, अक्सर ही सिद्धांत और व्यवहार अलग-अलग हो जाते हैं। स्कूल और विश्वविद्यालयों में हम अक्सर सिर्फ़ सिद्धांतों को पढ़ते हैं। और अपने रोज़मर्रा के जीवन में अक्सर हम नियमों पर अमल करने पर ध्यान देते हैं। हम इनके पीछे के सिद्धांतों के बारे में बहुत नहीं सोचते हैं। रूबी, मनोज, ध्रुविका और सलीम के सामने जो समस्याएँ हैं वे क़ानून के व्यवहार वाले पहलू से संबंधित हैं। लेकिन उन पर कार्रवाई करने के लिए उन्हें इन व्यावहारिक समस्याओं में से हरेक के सिद्धांतों को समझने की ज़रूरत है।

इन सभी कहानियों में आप रोज़मर्रा के जीवन से उभरने वाले क़ानूनी सवालों को देखेंगे। आप देखेंगे कि नौजवान लोग अपने अधिकारों को हासिल करने की कोशिश कर रहे हैं। आप इन हालात को सार्वजनिक या नागरिकों के लिए आम तौर पर उपलब्ध संदर्भों या जगहों में देखेंगे। इस छोटी सी व्यावहारिक किताब का उद्देश्य आपको अपने आसपास के परिवेश पर एक नई नज़र डालने के लिए प्रेरित करना है, ताकि आप इन तीन संदर्भों में क़ानून के बारे में सोचें।

आइए इनमें से हरेक संदर्भ पर थोड़े विस्तार से गौर करते हैं।

क़ानून और रोज़मर्रा का जीवन

आपने देखा होगा कि स्कूल की किसी इमारत, सिनेमाघर या बस और मेट्रो में घुसने पर इस बात की सूचनाएँ लगी होती हैं कि आप उस जगह में होते हुए क्या कर सकते हैं और क्या करने की आपको मनाही है | जैसे कि जब आप किसी स्कूल में जाते हैं तो वहाँ मोबाइल फ़ोन के इस्तेमाल के बारे में, या धूम्रपान करने और च्यूइंग गम को लेकर एक पोस्टर आपको दिख सकता है | हम जिन जगहों में आते-जाते और काम करते हैं, वहाँ की व्यवस्था और संचालन के लिए यह नियम बने होते हैं | इसके नतीजे में ये इसको प्रभावित करते हैं कि हम किस तरह से व्यवहार करें और कैसे पेश आएँ | हमारे रोज़मर्रा के जीवन में किस क़िस्म के नियम उभरते हैं? क्या क़ानून सिर्फ़ ऐसे नियमों को कहते हैं जिनका हमें पालन करना होता है? या यह उन अधिकारों को भी कहते हैं जो एक भरपूर जीवन जीने के लिए हमारे पास होने ज़रूरी हैं?

अगर क़ानून का मतलब सिर्फ़ नियम नहीं हैं, बल्कि कुछ और भी है, तो आइए स्कूल की इमारत वाले उदाहरण को फिर से लेते हैं | क्या स्कूल में हमारे कुछ अधिकार भी होते हैं जो निश्चित सुरक्षा विधियों, सेहतमंद और साफ़-सफ़ाई को लेकर मानदंडों या खेलकूद और सस्ती शिक्षा से जुड़ी सुविधाओं को निश्चित बनाते हैं?

इस किताब में हम ऐसे ही सवालों पर बात करने की कोशिश करेंगे | हम यह देखने की कोशिश करेंगे कि रोज़मर्रा की गतिविधियों में कानून किस तरह शामिल होता है | हम ऐसा करने की कोशिश इसलिए कर रहे हैं क्योंकि हम क़ानून के बारे में यह विचार आपके सामने रखना चाहते हैं कि यह सिर्फ़ एक अमूर्त, समझ में न आने वाली चीज़ नहीं है | यह कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो बहुत दूर होती है, और जिसकी ज़रूरत सिर्फ अदालतों, संसदों और सरकारी दफ़्तरों में होती है | बल्कि क़ानून एक ऐसी चीज़ है जिसे हम छू सकते हैं, महसूस कर सकते हैं | यह हमारे बहुत क़रीब की चीज़ है | आपको क्या लगता है? क्या क़ानून ऐसी चीज़ है जिस पर सिर्फ़ सोचा जा सकता है? या हम इसे महसूस भी कर सकते हैं? एक ऐसी चीज़ जो हम पर असर डालती है?

हममें से कइयों को दूसरों की तुलना में कानून अधिक साफ़ दिखाई पड़ सकता है | जैसे कि अगर हमारे मुहल्ले में पुलिस की गश्ती हो, जाँच करने के लिए चेक प्वाइंट्स हों, या कर्फ्यू हो | ऐसी चीजें क्यों होती हैं, हम उनकी वजहों के बारे में सोच सकते हैं | लेकिन हम अपने आसपास उनकी मौजूदगी को महसूस भी कर सकते हैं | क़ानून की ये निशानियाँ फ़ौरी तौर पर इस बात को तय करती हैं कि हम अपना जीवन किस तरह जीएँ | लेकिन क़ानून हमेशा इतना ज़ाहिर नहीं होता है | जैसे कि अगर हम शिक्षा के अधिकार के बारे में सोचें तो हमारा ध्यान फ़ौरन ही इस बात की तरफ़ जाएगा कि क्या हमारे मुहल्ले में स्कूल है | लेकिन क्या स्कूल इस बात को निश्चित बनाता है कि बच्चों के पास भारत में मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा का जो अधिकार है, वे उस पर अमल कर सकते हैं?

अगर आप क़ानून को देखने की कोशिश कर रहे हैं तो आप कहाँ देखेंगे? क्या आप किसी किताब को देखेंगे, जैसे कि अपने संविधान को? क्या आप इसे ऐसी जगहों में खोज सकते हैं जहाँ आप आते-जाते हैं?

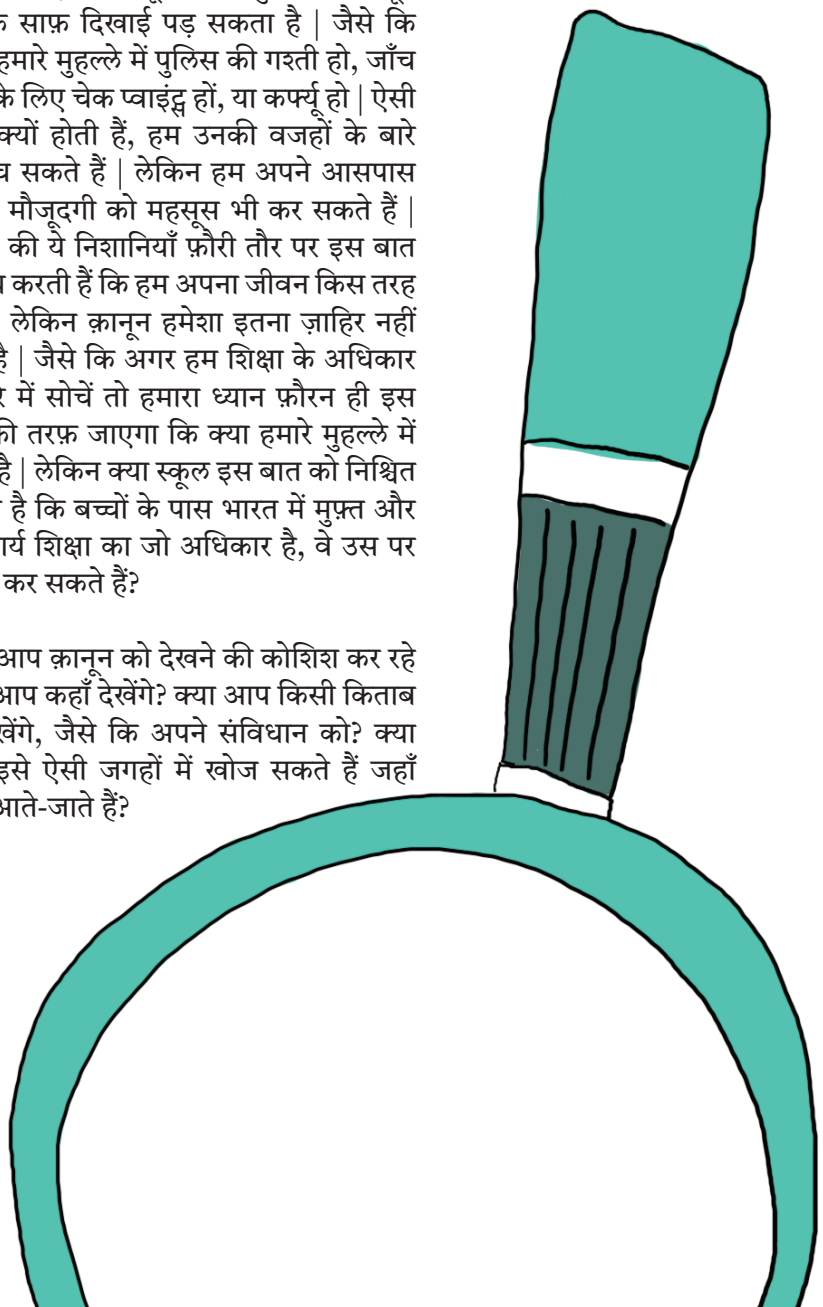

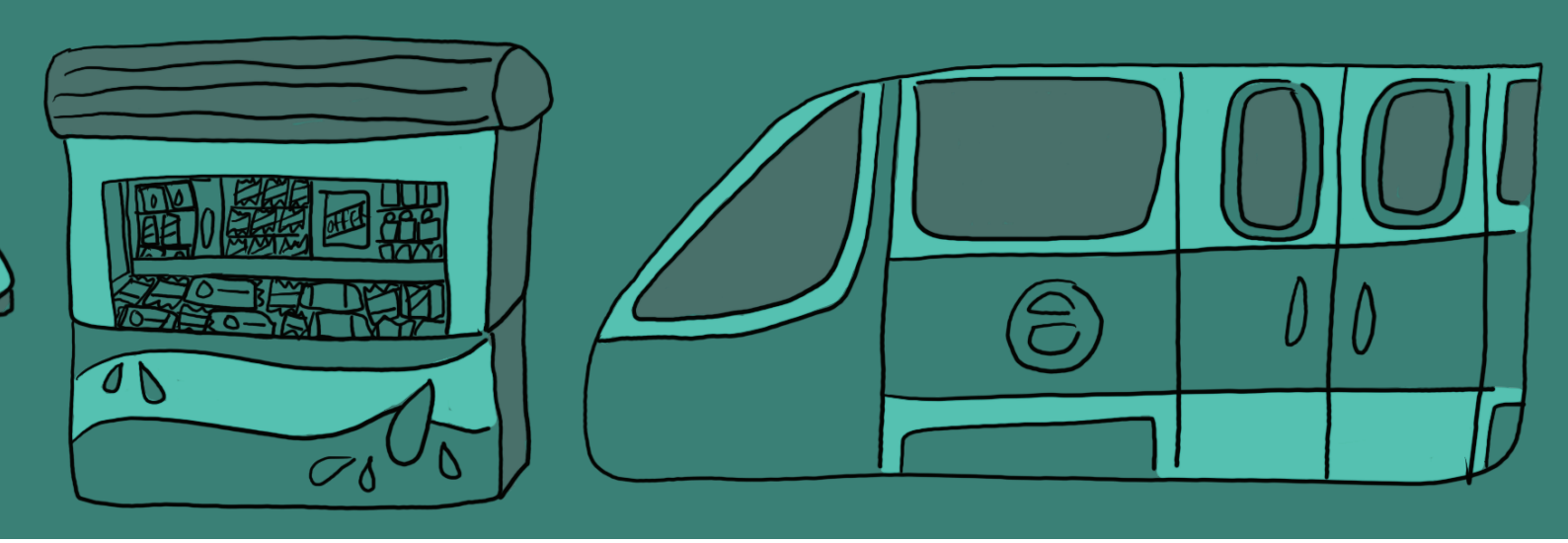

अगली बार जब आप किसी बस या मेट्रो में जाएँ, तो आसपास देखें | देखें कि क़ानून कौन-कौन से रूप लेता है | एक उदाहरण लेते हैं | मेट्रो में सीसीटीवी कैमरा होने के लिए क्या एक क़ानून की ज़रूरत पड़ती है? क्या हम उनके मकसद के बारे में सोच सकते हैं? अनेक लोग तर्क देते हैं कि मेट्रो पर लोगों की सुरक्षा को निश्चित बनाने के लिए ऐसे कैमरों का होना महत्वपूर्ण है | इसलिए ऐसे कैमरे महत्वपूर्ण हैं ताकि लोगों के पास शहर में आवाजाही का अधिकार हो | वहीं दूसरे लोग इस बात के ख़िलाफ़ यह तर्क दे सकते हैं कि आवाजाही के अधिकार को लोगों की निजता छीने बग़ैर भी मुहैया कराया जा सकता है | इसके लिए हमारी सारी आवाजाही और गतिविधियों को सरकार द्वारा निगरानी करना ज़रूरी नहीं है | हम चाहते हैं कि जब आप घर से स्कूल, काम की जगह, सिनेमाघर, अस्पताल या खेलने की जगहों पर जाएं तो यह सोचें कि आपको क़ानून के दूसरे पहलू कहाँ-कहाँ दिखाई पड़ते हैं |

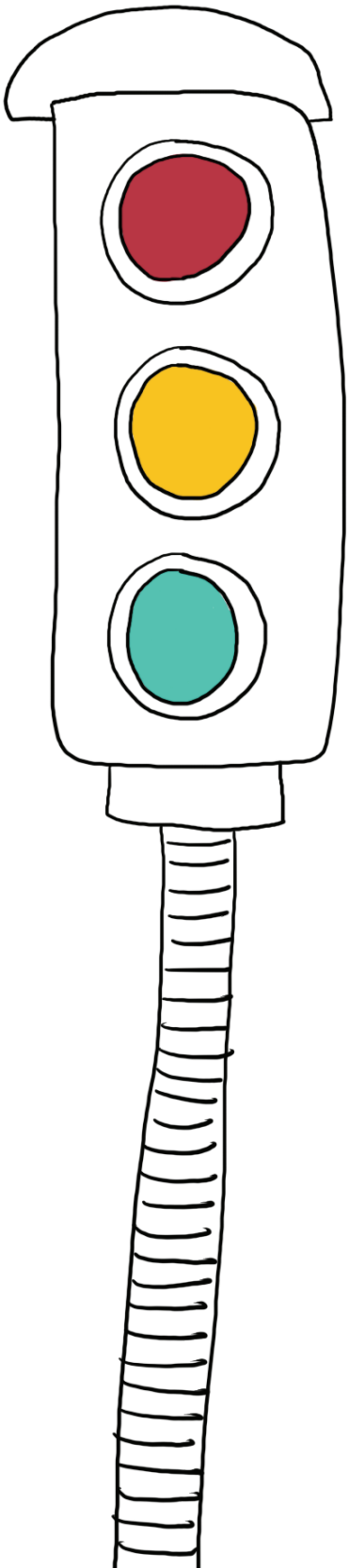

यह किताब आपको इस बात के लिए प्रेरित करती है कि आप क़ानून के बारे में अलग क़िस्म से सोचें | आप यह देख सकें कि क़ानून एक ऐसी चीज़ है जो सिर्फ़ किताबों से नहीं निकलती, बल्कि जिन जगहों में हम रहते हैं यह वहाँ भी आकार लेती है | एक बार जब आप इस विचार को अपना लेते हैं, तब हम यह भी चाहेंगे कि आप अपने आसपास देखें और कुछ ख़ास क़िस्म की सामग्री और स्थानों पर गौर करें | यह सामग्री कुछ नोटिसें हो सकती हैं या फिर ट्रैफ़िक लाइट जैसी कोई चीज़ हो सकती है | स्थानों में पिकनिक या आंदोलन की जगहें हो सकती हैं | इन पर गौर करते हुए आप यह सोचें कि कैसे ये विभिन्न सामग्री, वस्तुएँ और जगहें एक ख़ास क़िस्म के अर्थ बनाती हैं, जिनकी वजह से हम यह सोचने लगते हैं कि हमें किस तरह पेश आना चाहिए, या कैसे हमें किसी ख़ास जगह में माँगें रखनी चाहिए |

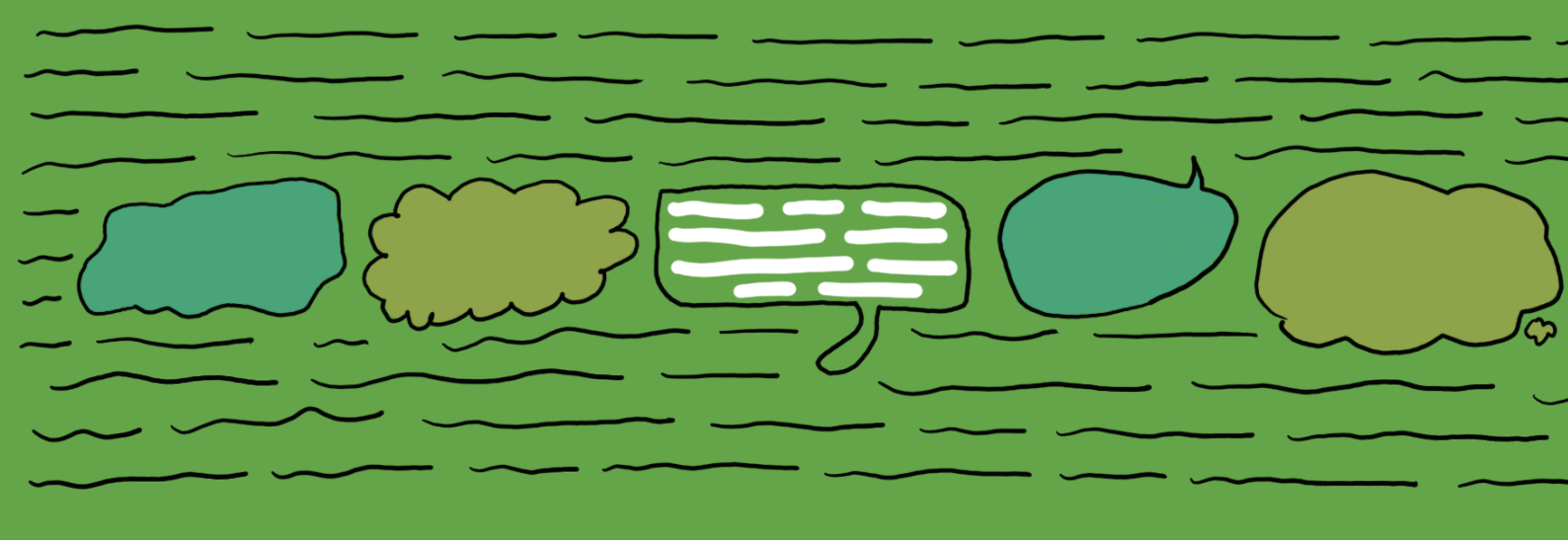

युवा और क़ानून

नीचे दिए गए हालात के बारे में सोचें |

आपको शहर के केंद्र से मुख्य ट्रेन स्टेशन जाना है | आपको सिर्फ़ इतना पता है कि आप अभी कहाँ हैं, और आपको कहाँ पहुँचना है | लेकिन आपको यह नहीं पता कि आप वहाँ किस तरह जाएँगे | तब इनमें से कौन-सा उपाय सबसे मददगार होगा?

- आपके चलने से पहले कोई आपके पूरे रास्ते की जानकारी दे |
- आप चलते जाएँ और रास्ते में लोगों से पूछते जाएँ |
- आपके पास अपना एक मैप (नक़्शा) हो जिसमें आपका रास्ता साफ़-साफ बताया गया हो |

पहले दोनों उपाय उपयोगी हो सकते हैं, लेकिन वे शायद उतने भरोसेमंद न हों | मुमकिन है कि आप रास्ते भूल जाएँ, या आप जिससे रास्ता पूछ रहे हों उसको सही रास्ता न मालूम हो | यह भी हो सकता है कि बीच में कोई रास्ता बंद हो और आपको पता न हो कि वहाँ से किस तरफ़ जाया जाए | अगर आप रास्ते में लोगों से पूछते हुए चलें तो यह मुमकिन है कि आपको अधिक वक़्त लग जाए क्योंकि मुमकिन है लोगों को भी रास्ता न मालूम हो | अगर आपके पास एक मैप हो तो आप ख़ुद सबसे अच्छा रास्ता चुन सकते हैं | रास्ता बंद हो या लोग आपको न बता पाएँ कि आप कहां हैं, तब भी मैप आपकी मदद कर सकता है |

इसी तरह आपके पास जो सबसे शक्तिशाली औज़ार हो सकता है वह है क़ानून की जानकारी है और यह पता होना कि इसके बारे में जानकारी और कहां मिल सकती है | अपने अधिकारों और कर्तव्यों की जानकारी होना वैसा ही है जैसे आपके पास अपना एक मैप होना | इसकी मदद से आप ख़ुद को अन्याय से बचा सकते हैं | वकीलों जैसे दूसरे विशेषज्ञ इसमें आपकी मदद कर सकते हैं, लेकिन इंसाफ़ के सफ़र में आप खो जाएँगे अगर आप इस बात की साफ़-साफ़ पहचान करने के काबिल नहीं है कि समस्या कहां है और आपको कहां से मदद लेनी चाहिए |

कल्पना कीजिए कि आपको यह पता न हो कि भारत के संविधान में बराबरी के अधिकार की एक मौलिक अधिकार के रूप में गारंटी की गई है | इसका क्या नतीजा हो सकता है? तब आप शायद यह नहीं जान पाएँ कि कोई रोज़गारदाता आपके साथ जाति, धर्म, लिंग वग़ैरह के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकता है | आप यह नहीं जान पाएँ कि अगर किसी ने आपके साथ भेदभाव किया तो आप अदालत जा सकते हैं | मान लीजिए कि आप यह नहीं जानते कि भारत में 18 साल उम्र से अधिक के हरेक नागरिक को वोट डालने का अधिकार है | आपको यह नहीं पता चलेगा कि आप चुनावों में भागीदारी कर सकते हैं | इस तरह आप सरकार के बारे में अपनी राय को व्यक्त करने की सबसे अहम भूमिका यानी अपने वोट का इस्तेमाल नहीं कर पाएँगे | आप अन्यायपूर्ण व्यवहारों का निशाना बन सकते हैं, अगर आप यह नहीं जानते कि आपके अधिकार क्या हैं, और आप उनकी रक्षा कैसे कर सकते हैं |

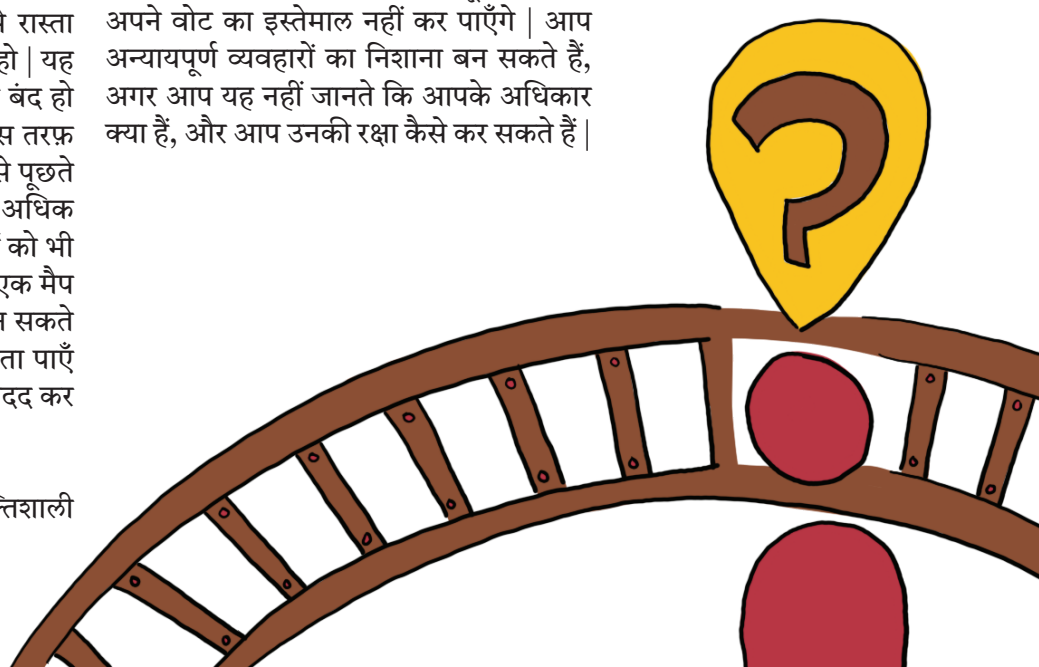

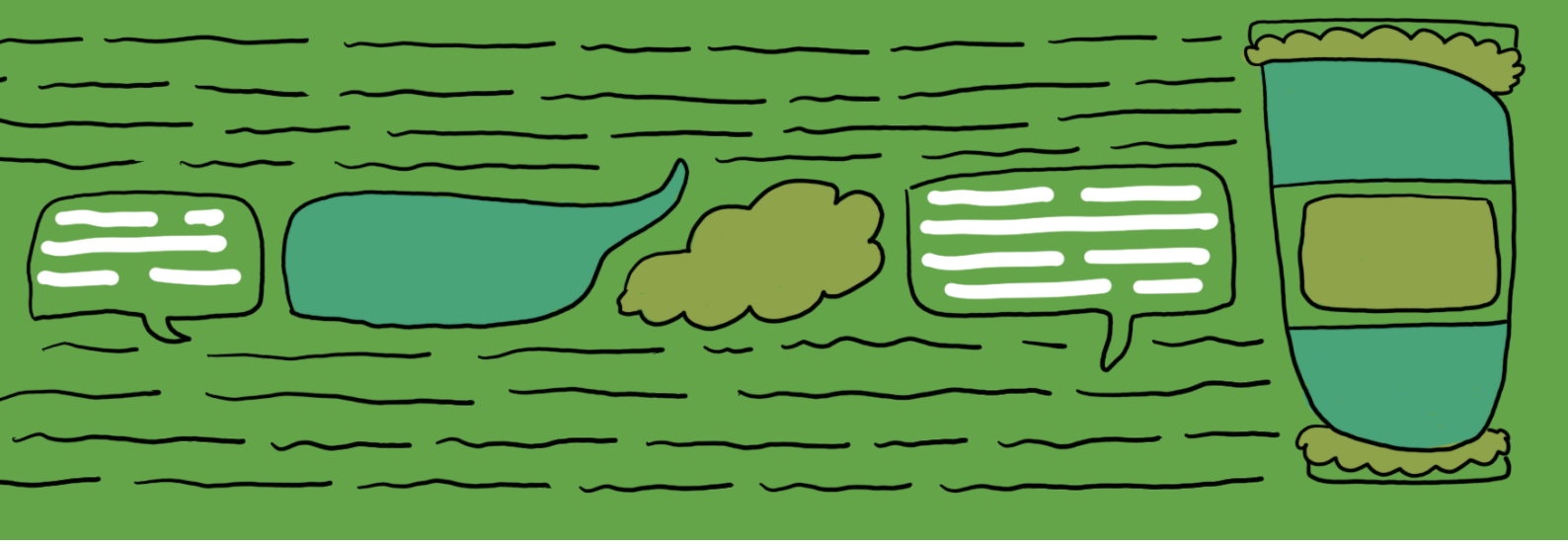

ऐसा लगता है कि क़ानून बड़ों की चीज़ हैं | लेकिन क्या यह सच है कि ये सिर्फ़ बड़ी उम्र के लोगों को ही प्रभावित करते हैं? युवा लोगों का क़ानून से क्या रिश्ता हो सकता है? सच बात तो यह है कि क़ानून हम सभी के लिए प्रासंगिक हैं, चाहे हम किसी भी हालात में हों, और चाहे हमारी उम्र कुछ भी हो | जैसे कि समानता के अधिकार की गारंटी हम सभी के लिए है | अगर आपकी उम्र चौदह साल है और आपको आपके धर्म के चलते किसी खास स्कूल में दाख़िल होने की इजाज़त नहीं मिलती तो आप उस स्कूल के ख़िलाफ़ अदालत जा सकते हैं | जब आपको अपना पहला रोज़गार मिलता है, और अगर आप एक महिला हैं और आप किसी भी रूप में यौन उत्पीड़न का सामना करती हैं, तब आप अपने संगठन की अंदरूनी शिकायत समिति में अपील कर सकती हैं | क़ानून के मुताबिक़ काम की जगहों पर ऐसी समिति का होना ज़रूरी है | अपने अधिकारों की माँग उठाने के लिए आपको वयस्क होने या एक ख़ास हैसियत हासिल करना ज़रूरी नहीं है | अपने जन्म से भारत का नागरिक होने के नाते आप हमारे संविधान के तहत इन अधिकारों के हक़दार हैं |

इसका एक दूसरा पहलू भी है | कानून आप पर हमेशा लागू होता है, यह आपके एक ख़ास उम्र का होने तक इंतज़ार नहीं करता है | क़ानून का पालन नहीं करने पर आपको सज़ा हो सकती है | अगर आप तेज़ रफ़्तार गाड़ी चला रहे हों और पुलिसकर्मी आपको पकड़ ले तो आप यह दावा नहीं कर सकते कि आपको गति सीमा (स्पीड लिमिट) नहीं पता थी और आपने बस अभी अभी ड्राइव करना सीखा है | पुलिसकर्मी आपको जुर्माना कर सकता है | अगर आप अभी अवयस्क हैं, यानी अगर आप 18 साल से कम उम्र के हैं, तो इस बात का ख़्याल रखा जाएगा | लेकिन आपको अभी भी उन नुक़सानों के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है जो आपकी तेज रफ्तार से हुए हों | हम चाहे किसी भी पृष्ठभूमि से आते हों, हम सभी के लिए क़ानून का पालन करना ज़रूरी होता है |

क़ानून एक मुर्दा चीज़ नहीं होती है | जैसे कि शिक्षा का अधिकार अधिनियम सिर्फ़ 2004 में जाकर पारित हुआ था | संसद में जब कोई विधेयक पारित होकर अधिनियम बनता है, तो आप शायद इस प्रक्रिया का सीधे-सीधे हिस्सा नहीं होते हैं | लेकिन किसी विधेयक पर होने वाली सार्वजनिक चर्चा में हिस्सेदारी करने के लिए आपको 18 साल से अधिक उम्र का होना ज़रूरी नहीं है | इसे विधेयक-पूर्व सार्वजनिक परामर्श कहा जाता है | आप अपने दोस्तों के साथ मिल कर ऐसे कानूनों के लिए अभियान चला सकते हैं जो अधिक न्यायपूर्ण हों, और जो अधिक लोगों की जरूरतों को पूरा करते हों | एक बार आप वोट डालने की उम्र के हो जाएँ तो आप इस बात का फ़ैसला कर सकते हैं कि संसद में आपका प्रतिनिधित्व कौन करेगा | अगर आप अपने अधिकारों और कर्तव्यों को जानते हैं, आप यह जानते हैं कि आपसे क्या अपेक्षा की जाती है, आप बदलाव ला सकते हैं |

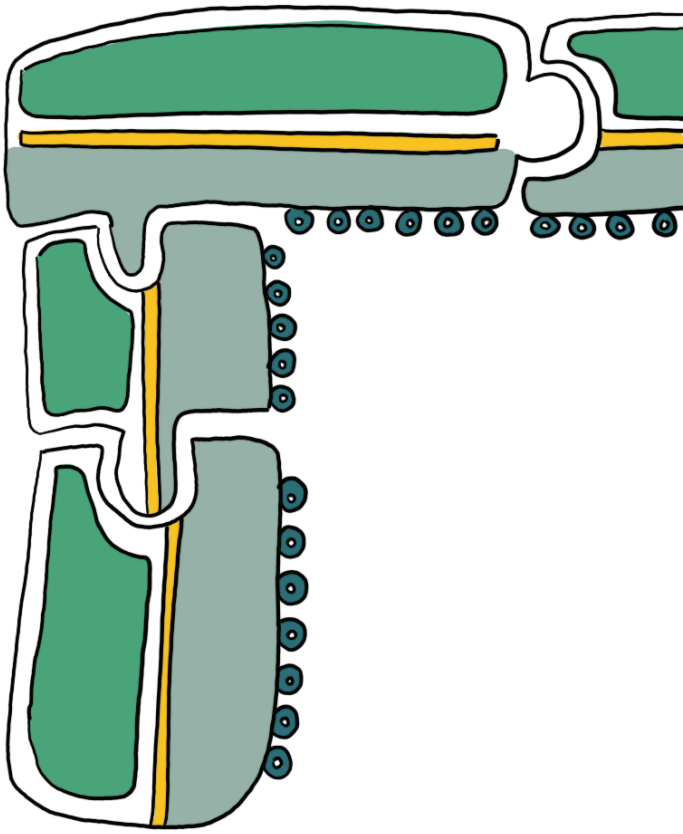

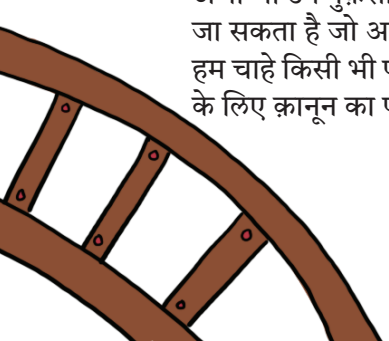

हमारी नागरिक जगहें

तो अब हम अपने रोज़मर्रा के जीवन में क़ानून के बारे में सोच रहे हैं | लेकिन यह रोज़मर्रा का जीवन है क्या? हम किसी भी दिन अलग-अलग क़िस्म के हालात को देखते हैं | आप अपने परिवेश की रोशनी में अपने बारे में सोचिए | आप जिन अलग अलग जगहों पर जाते हैं, क्या आप एक ही शख़्स होते हैं? क्या आप घर पर, स्कूल में, खेल के मैदान में, अपने काम की जगह पर या अपने स्थानीय प्रशासनिक दफ़्तर में जाने पर एक ही तरह से व्यवहार करते हैं? जिस तरह हम अलग अलग जगहों पर अलग अलग भूमिकाएँ अपना लेते हैं, क़ानून के साथ भी ऐसा ही है | क़ानून के बारे समझने का एक बेहतर तरीक़ा यह है कि इसे जगहों के संदर्भ में समझा जाए |

आपका घर, आपका स्कूल या आपके काम की जगह कुछ जानी-पहचानी जगहें हो सकती हैं | इस किताब में ध्यान इस चर्चा पर दिया गया है कि नागरिक जगहों पर आपके सार्वजनिक जीवन और सार्वजनिक भागीदारी को क़ानून किस तरह आकार देता है |

नागरिक जगहें क्या होती हैं?

नागरिक जगहों को किसी समुदाय के एक विस्तार के रूप में सोचें | यह एक भौतिक जगह होती है जहाँ कोई व्यक्ति ख़ुद को व्यक्त कर सकता है और समुदाय का एक सक्रिय सदस्य हो सकता है | नागरिक जगहों का उपयोग संगठित होने, व्यक्त करने, आंदोलन करने या विरोध ज़ाहिर करने तथा बदलाव लाने के लिए किया जा सकता है | आइए अपने आसपास के परिवेश की छानबीन करते हैं और देखते हैं कि कैसे हम इन जगहों को नागरिक जगहों के रूप में समझ सकते हैं |

नागरिक जगहें कार्रवाई से जुड़ी हुई होती हैं | एक क़ानूनी, राजनीतिक और सामाजिक दायरा होता है जो हमसे माँग करता है कि हम

- जानकार बनें
- जागरूक बनें
- भागीदार बनें

आप अपने आसपास इन तीनों साझे क्षेत्रों की पहचान करें | इनके रोज़मर्रा के मक़सद के बारे में सोचें और इसके बारे में सोचें कि इन्हें किस तरह नागरिक जगहों के रूप में बदला जा सकता है |

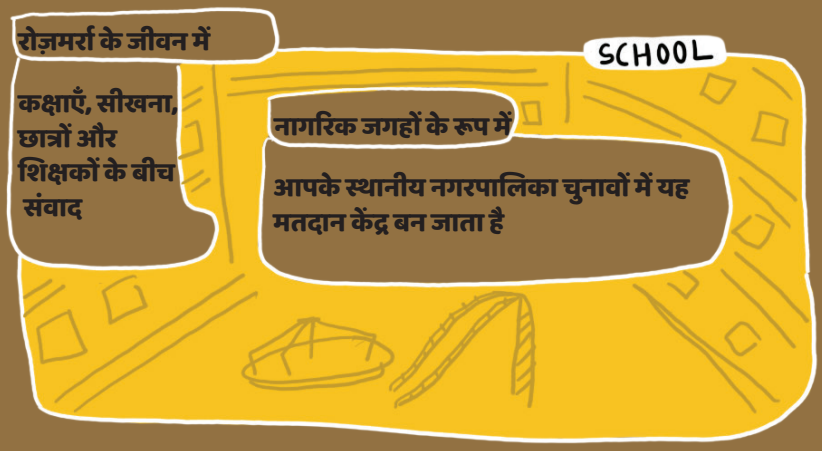

लेकिन बात सिर्फ़ इतनी ही नहीं है | नागरिक जगहों का बचाव करने की ज़रूरत पड़ती है | ये ऐसी जगहें हैं जहाँ अपनी पृष्ठभूमि, उम्र, जाति, धर्म, लिंग, रंग के आधार पर भेदभाव के बिना सभी नागरिक अपने अधिकारों पर अमल करने के लिए आ सकते हैं | इसका मतलब यह है कि इन जगहों का सुरक्षित होना ज़रूरी है | इस किताब में कुछ ऐसे बड़े क़ानूनी सवाल दिए गए हैं जो आपको नागरिक जगहों को समझने में आपकी मदद करेंगे | आप इनमें अपनी भूमिका को और अपनी भूमिका निभाने के तरीक़ों को भी समझ सकेंगे |

किताब का उपयोग कैसे करें

अगले कुछ अध्यायों में आप उस अहम क़ानूनी संरचना को समझने के एक सफ़र पर निकलेंगे जो आपकी नागरिक जगह को संभव बनाती है | आप इन मुद्दों पर क़रीब से नज़र डालेंगे:

संविधान

इसके बुनियादी सिद्धांत क्या हैं? ये सिद्धांत किस तरह हमारे क़ानूनों का आधार बनते हैं?

अदालतें

हमारी अलग-अलग अदालतें कैसे बनी हैं, और उनका आपस में क्या रिश्ता है? उन तक कैसे पहुँचा जा सकता है?

आपराधिक न्याय प्रणाली

जब हम पाते हैं कि हमारा क़ानून के साथ एक टकराव की स्थिति बन रही है, ऐसे में क्या होता है? अगर हम एक अपराध का शिकार बन जाएँ तो हमें व्यवस्था के साथ कैसे पेश आना चाहिए?

चुनावी व्यवस्था

सरकार में औपचारिक भागीदारी कैसी होती है? इसको संभव बनाने वाले सिद्धांत और व्यवस्थाएँ कौन-सी हैं?

लेकिन आपको एक सीधा नियम याद रहना चाहिए | हम सिद्धांत और व्यवहार के बीच की खाई को भरने की कोशिश कर रहे हैं | इसलिए हरेक सिद्धांत के साथ-साथ उससे जुड़ी गतिविधियाँ दी जाएँगी | और हरेक बिंदु पर आपसे उम्मीद की जाती है कि आप अपने संदर्भ और परिवेश के बारे में सोचें |

जहाँ भी आप ? चिह्न को देखें, अपने आसपास देखने और सोचने के लिए तैयार हो जाएँ - आपको अपने एकदम आसपास के परिवेश पर, या उस कार्रवाई के बारे में सोचने की ज़रूरत होगी जिसे आप पढ़ रहे हैं |

जब आप चिह्न को देखें, तो ठहरें | यह ऐसी जगह है जहां आपको रुक कर एक खास तौर से गौर करने की ज़रूरत है | इसको आप एक ख़ास बिंदु या तरकीब के रूप में देखिए - यह एक ऐसी चीज़ है जिसे याद रखने की ज़रूरत है |

हर अध्याय की शब्दावली को भी ज़रूर देखें, उनके बारे में और भी जानकारी जुटाएँ | यह किताब एक शुरुआत है, इसको आधार बना कर और भी चीज़ें जानने की कोशिश करें |

आख़िरकार यह किताब आपको सशक्त बनाने के लिए बनी है | हम उन समस्याओं की बात उठा रहे हैं, जो अक्सर ही बहुत मुश्किल मालूम पड़ती हैं | हम उन्हें छोटी, और आसानी से हल हो सकने वाले हिस्सों में सुलझा कर पेश कर रहे हैं |

एक बार इस किताब को पूरा कर लेने के बाद हमें क्या अंतर दिखाई देगा?

इस किताब के अंत तक पहुँचने के बाद आप इन बातों में सक्षम हो सकते हैं:

- अपने रोज़मर्रा के जीवन और अपने करीबी परिवेश में क़ानून की मौजूदगी को पहचानना |
- क़ानून को दूर-दराज की कोई चीज़ न समझ कर इसे अपने ख़ास संदर्भ में सोचना |
- संस्थानों, व्यक्तियों और विधियों के पीछे के सिद्धांतों और तर्क को समझना |
- अपनी नागरिक जगह को एक ऐसी जगहों के रूप में समझना जो साफ़ हैं और उनमें कार्रवाई की जा सकती है | क़ानून के बारे में सरल और आसान तरीक़े से बातें करना!

विचार यह है कि आप अपने आसपास के परिवेश को एक नई नज़र से देखें, अपने फ़ैसले ख़ुद से लेने की ताकत को हासिल करें और उम्मीद को फिर से जगाएँ |

अध्याय 2
संविधान और आप

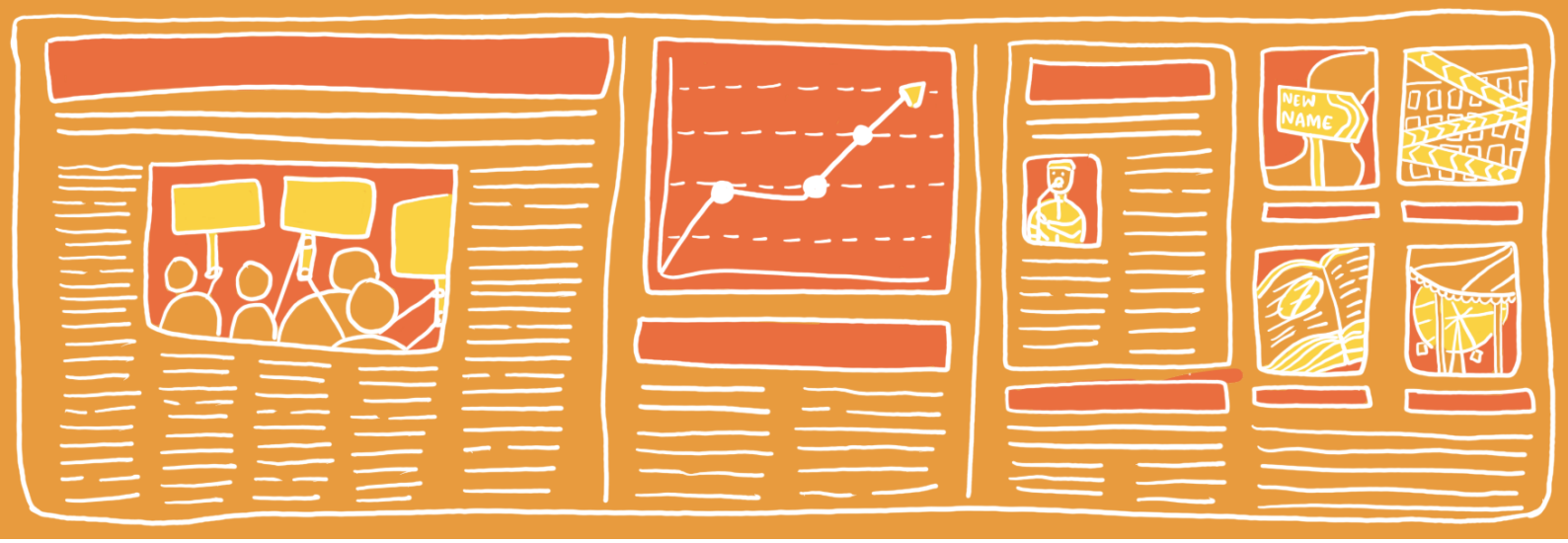

शुरुआत

आप किसी भी दिन, महीने, साल का अख़बार देखें | अपने अधिकारों के लिए आंदोलन कर रहे लोगों की ख़बरों पर घेरा लगाएँ | चाहे यह खेती से जुड़े आंदोलन हों, या सिनेमा, खिलाड़ियों की सुरक्षा, बढ़ती हुई क़ीमतों, लाइसेंस रद्द होने, स्कूल की पोशाकों, या आरक्षण पर चर्चाओं को लेकर होने वाले आंदोलन | और फिर उन ख़बरों पर भी घेरा लगाएँ जिनमें सरकार की किसी कार्रवाई का ज़िक्र हो - राज्यों के और राष्ट्रीय चुनाव, कोई आपराधिक सुनवाई, किसी अदालत या जाँच एजेंसी का कोई फ़ैसला, सड़कें और पुल बनवाना, राजनीतिक दलों का बदलना, पुलिस के छापे, किसी नई विकास योजना की शुरुआत | अब उन ख़बरों पर भी घेरा लगाएँ जो भारत के इतिहास से जुड़ी हुई हों - स्मारकों का जीर्णोद्धार, सड़कों के नामों को बदलना, इतिहास की स्कूली किताबों से जुड़ी सामग्री, अतीत के नेताओं और प्रतिष्ठित लोगों की याद में मनाए जाने वाले दिवस, त्योहारों के उत्सव |

आपने जो भी ख़बर पढ़ी है और जो भी सवाल आपके दिमाग़ में उठे हुए होंगे, वे सभी एक दस्तावेज़ से जुड़ते हैं- 1950 के भारत के संविधान से |

भारत का संविधान हो या चाहे किसी भी देश का संविधान, यह एक ऐसा दस्तावेज़ होता है जो उस देश की सभी गतिविधियों को निर्देशित करता है | इसके तीन मुख्य काम होते हैं:

- यह उन अधिकारों की पहचान करता है जो हमें हासिल होते हैं | सरकारें इन अधिकारों का सम्मान करें और उनकी रक्षा करें, इसके लिए संविधान नियम भी बनाता है |
- यह राज्य के तीन अंगों को स्थापित करता है: विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका | यह उनके बीच के संबंधों और उनके कर्तव्यों को भी बताता है |
- और आख़िरकार यह इस देश के सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक इतिहास का सम्मान करता है |

संविधान क्या होता है?

संविधान शासन का एक बुनियादी घोषणापत्र होता है | इस बात का क्या मतलब है? जब लोग एक साथ रहने का फ़ैसला करते हैं तो इसके लिए नियमों की ज़रूरत होती है कि वे किस तरह एक साथ रहेंगे | और फिर इसका मतलब यह भी है कि कोई ऐसा हो जो उन नियमों को लागू कराए और इसको पक्का बनाए कि लोग उन पर चल रहे हैं |

इसके अलावा, यह भी ज़रूरी है कि जिन लोगों पर इसकी ज़िम्मेदारी होती है, वे ख़ुद नियमों को नहीं तोड़ सकते हैं | यहीं पर संविधान की ज़रूरत पड़ती है | एक संविधान किसी समाज और किसी देश के लिए सभी नियमों को क़ायम करता है ताकि वे सामंजस्य के साथ रह सकें | ये वे नियम हैं जिनका लोगों और उनके "शासनकर्ताओं" दोनों के लिए पालन करना ज़रूरी है | दूसरे शब्दों में, यह किसी देश का सबसे बड़ा क़ानून होता है |

इससे यह लग सकता है कि संविधान एक बहुत ही ताकतवर दस्तावेज है, जिसे हम शायद ही कभी देखते या उसके बारे में सुनते हैं | यह भी लग सकता है कि इसका हमसे कोई लेना-देना नहीं है | आख़िरकार थोड़े से लोगों के एक छोटे से समूह ने 75 साल पहले इसे लिखा था | लेकिन इन तीन हालात की कल्पना करें

मान लीजिए कि आपके पास एक सरकारी नौकरी है जिसको आपने अपने प्रदर्शन के आधार पर हासिल किया था | एक दिन आपको बिना कोई वजह बताए अपनी नौकरी से हटा दिया जाए |
क्या आपको यह जानने का हक़ है कि आपको क्यों हटाया गया?

मान लीजिए आप स्कूल में परीक्षा दे रहे हैं | आपका □दोस्त□ आपके पास एक चिट फेंकता है, लेकिन आपकी दिलचस्पी उस चिट में नहीं है| आपने उसे देखा भी नहीं है | लेकिन शिक्षक ने आपके पैरों के पास चिट देख लिया और सोचा कि आप नक़ल कर रहे हैं और आपकी बात सुने बग़ैर उन्होंने आपकी परीक्षा रद्द कर दी |
जो हुआ क्या वह मुनासिब था?

मान लीजिए कि आप किसी नए क़ानून के ख़िलाफ़ विरोध ज़ाहिर करने किसी शांतिपूर्ण आंदोलन में गए | इसके फ़ौरन बाद पुलिस आती है और भीड़ पर लाठी चलाना शुरू करती है और सुरक्षा के नाते उसे तितर-बितर कर देती है | पुलिस के लिए ऐसा करना क्या न्यायसंगत था?

सहज रूप से आप गौर करेंगे कि आपके जवाब इस प्रकार के हो सकते हैं:

- हाँ, मुझे जानने की ज़रूरत है कि क्या मैंने कुछ ग़लत किया है | अगर नहीं तो मुझे अपनी आजीविका खोना नहीं चाहिए था |
- नहीं, यह मुनासिब नहीं था | शिक्षक को चाहिए था कि वे मेरा पक्ष सुनतीं और मुझे यह बताने का मौक़ा देतीं कि मैं नक़ल नहीं कर रहा था |
- नहीं, पुलिस ने यह सही नहीं किया | लोगों को जो बात अन्यायपूर्ण लगती है, उसका विरोध करने का उन्हें अधिकार होना चाहिए | पुलिस उनके ख़िलाफ़ हिंसक तरीक़े से पेश नहीं आ सकती है |

इन जवाबों में से हरेक जवाब भारत के संविधान के एक “अनुच्छेद” या एक प्रावधान से जुड़ता है | जैसे कि पहला और दूसरा जवाब अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 21 पर आधारित हैं | अनुच्छेद 14 समानता या बराबरी के अधिकार की बात करता है | वहीं अनुच्छेद 21 में जीवन के अधिकार की बात कही गई है |

तीसरा जवाब संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) से जुड़ा हुआ है, जो बोलने और अभिव्यक्ति की आज़ादी के बारे में है |

यह दिखाता है कि संविधान हम सबके और हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी के बहुत क़रीब है |

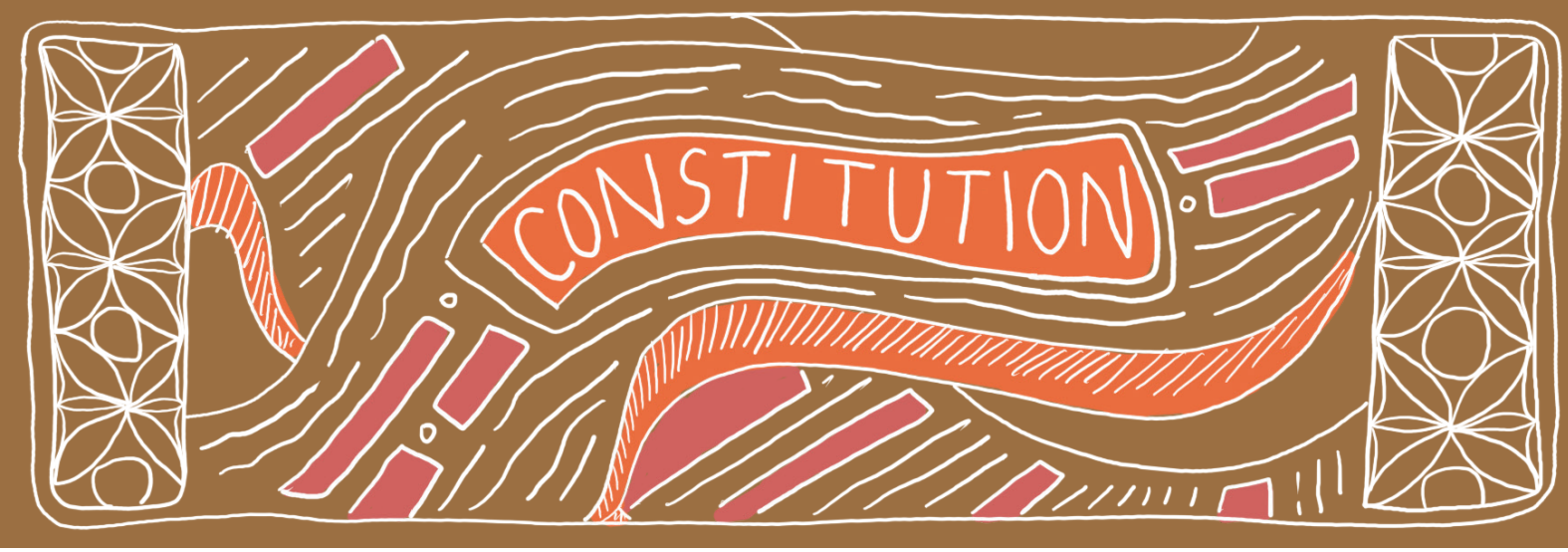

भारत के संविधान का आम ढाँचा:

भारत के संविधान के 25 भाग, 448 अनुच्छेद, और 12 अनुसूचियाँ हैं | इनके चलते यह आकार में दुनिया का सबसे बड़ा संविधान है |

दुनिया के सबसे बड़े आकार के संविधान को पढ़ना किसी के लिए भी एक हतोत्साहित या डरा देने वाली बात हो सकती है | तब फिर शुरुआत कहाँ से की जाए? आप इसे उसी तरह शुरू कर सकते हैं, जिस तरह आप कोई भी किताब शुरू करते हैं | इसकी विषय सूची (index) से | पूरी विषय सूची को आराम से देखें, आपकी दिलचस्पी के मुताबिक़ कुछ हिस्से आपका ध्यान खींचेंगे |

मज़ेदार बात यह है कि विषय सूची में आप पाएँगे कि अंतिम अनुच्छेद 395 है न कि 448 | क्या आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि ऐसा क्यों है? इसका जवाब ख़ुद विषय सूची में ही मिल जाएगा |

प्रस्तावना

संविधान की प्रस्तावना यह बताती है कि संविधान किस बारे में है, इसके मुख्य सिद्धांत क्या हैं और इसे क्यों बनाया गया है। यह संविधान का सार है जो इसकी दिशा और उद्देश्य को स्पष्ट करता है। यह उन बुनियादी मूल्यों की पहचान करती है, जिनको संविधान अपने विशिष्ट प्रावधानों में आखिरकार अपनाएगा | भारत में प्रस्तावना की बुनियाद जवाहरलाल नेहरू द्वारा 1946 में पेश किए गए उद्देश्य प्रस्ताव पर पड़ी |

अभी बस प्रस्तावना पढ़ें - इसमें जो शब्द लिखे गए हैं, क्या हम उनमें से किसी भी एक को अपवाद के रूप में ले सकते हैं? क्या आपको लगता है कि उनमें से कोई शब्द अब लागू नहीं होता है? आपको अगर उसमें कोई शब्द जोड़ने को कहा जाए, तो आप क्या जोड़ना पसंद करेंगे?

इस अतिरिक्त तथ्य के बारे में सोचिए - 1978 में प्रस्तावना में संशोधन करके "समाजवादी" और "धर्मनिरपेक्ष" शब्द जोड़े गए | आपके मुताबिक़ इन शब्दों का क्या मतलब है?

संविधान सभा की बहसें

कल्पना कीजिए कि आप अपनी कक्षा के मॉनिटर के साथ मिलकर अपनी कक्षा के लिए कुछ नियम बनाने जा रहे हैं | ये वे नियम होंगे जो पूरे अकादमिक साल तक आपको प्रभावित करेंगे - ये नियम अंतिम तारीख़ों (deadline), देर से असाइनमेन्ट जमा करने के दंड, और उन दिनों की कुल संख्या के बारे में होंगे जब आप गैरहाजिर रह सकते हैं, आदि | आपकी कक्षा में 100 लोग हैं | आपके मॉनिटर ने कुछ नियमों का मसौदा बनाया और छात्रों से उन पर मत (vote) डालने के लिए कहा |

नियम	पक्ष	विपक्ष
कक्षा में चर्चा के दौरान कोई भी छात्र दो बार से ज़्यादा नहीं बोल सकता है		90	10
आपकी कक्षा का नाम वंडरलैंड है		70	30
कक्षा की कोई आधिकारिक भाषा नहीं है	छात्र आपस में जिस भी भी भाषा में सहज हो बातें कर सकते हैं		55	45

अब इन सवालों के जवाब दें:

इनमें से कौन सा नियम पूरे अकादमिक साल में सबसे अधिक लंबे समय तक चलने की संभावना है? और कौन सा नियम चाहे मंज़ूर हो जाए लेकिन इसकी संभावना अधिक है कि उसे बदल दिया जाएगा?

नियमों को बनाने की ऐसी ही एक प्रक्रिया भारत की संविधान सभा में चलाई गई थी | इसी सभा के ऊपर भारत के संविधान का मसौदा लिखने की ज़िम्मेदारी थी | संविधान सभा की बहसें 9 दिसंबर 1946 को शुरू हुईं और 24 जनवरी 1950 तक चलती रहीं | इन तीन वर्षों के दौरान संविधान के लेखकों ने संविधान के हरेक अनुच्छेद पर चर्चा की, बहस की, उनके मसौदों को लिखा, और बार-बार लिखा | उनकी कोशिश यह थी कि कोई ख़ास प्रावधान अंतिम रूप में लिखा जा सके, उसके पहले उस प्रावधान और उसकी भाषा पर सभा के सदस्यों के बीच ज़्यादा से ज़्यादा सहमति बन पाए |

संविधान का मसौदा लिखने की प्रक्रिया में सबके बीच में आम सहमति का बनना एक बहुत अहम हिस्सा था | संविधान लिखने वाले लोगों ने सावधानी बरती और आम बहुमत से फ़ैसले नहीं लिए | यह एक अच्छा फ़ैसला था |

?

संविधान सभा की बहसों का कोई एक हिस्सा पढ़ें | यह □भाषा□ के बारे में अंश हो सकते हैं, या फिर संविधान का अनुच्छेद 1 हो सकता है | एक अनुच्छेद का मसौदा लिखने के दौरान बातचीत और इस मसौदे पर चर्चा की प्रक्रिया के बारे में आप क्या सोचते हैं? अगर आपको लगता है कि आप इससे कुछ सीख सकते हैं, तो यह राजनीतिक संवाद और फ़ैसले लेने के बारे में आपको क्या सिखाता है?

भारत के संविधान की बुनियादी अवधारणाएँ और इसकी मुख्य बात

भारत के संविधान को समझने के लिए बुनियादी तौर पर दो अवधारणाओं को जानना ज़रूरी है | ऐसा नहीं है कि ये सिद्धांत सिर्फ़ भारत में ही मौजूद हैं | बल्कि वे क़रीब-करीब हरेक आधुनिक संविधान की विशेषता हैं | ये अवधारणाएँ हैं

- संविधानवाद
- शक्तियों का बँटवारा
  - क्षैतिज (Horizontal)
  - ऊर्ध्व (संघवाद) (Vertical Federal)

सबसे आसान शब्दों में कहें तो संविधानवाद का मतलब है सत्ता या शक्तियों के ऊपर सीमाएँ क़ायम करने का विचार | यह ज़रूरत इस तथ्य पर आधारित है कि कोई भी सत्ता सीमाहीन नहीं हो सकती है | अगर कोई व्यक्ति अपार शक्ति का उपयोग करता है, तब उस सत्ता के तहत रहने वाले लोगों की आज़ादी सीमित हो जाती है | जब शासन का एक दस्तावेज़ यानी संविधान, लोगों को दी जाने वाली शक्तियों पर सीमाएँ लगाता है, तब ऐसे संविधान को संविधानवाद कहा जाता है |

शक्तियों का बँटवारा शक्ति को सीमित करने का एक तरीक़ा है | शासन एक जटिल गतिविधि होती है जिसके अनगिनत पहलू होते हैं | इसमें सामाजिक मुद्दों की पहचान शामिल होती है, इसके तरीक़े बताए जाते हैं कि इन मुद्दों से कैसे निबटा जाए, और आख़िरकार यह बताया जाता है कि अगर कोई विवाद उठ खड़ा हो तो उसको किस तरह हल किया जाए | अगर इनमें से सभी काम और उससे जुड़ी शक्तियाँ किसी एक इंसान को दे दी जाएँ तब (क) सत्ता असीमित हो जाती है और (ख) एक इंसान के लिए इन सभी कामों को कारगर तरीक़े से पूरा करना नामुमकिन होगा |

इसलिए भारत समेत ज़्यादातर संविधान में तीन संस्थान बनाए गए हैं - कार्यपालिका (जो नीतियाँ बनाती है), विधायिका (जो क़ानून बनाती है) और न्यायपालिका (जो विवादों को हल करती है) | ऐसा करने से शासन की शक्तियाँ राज्य की तीन शाखाओं के बीच बँट जाती हैं | इस तरह से वितरण या बँटवारे से सत्ता या शक्ति एक ही जगह जमा होने से बच जाती है | भारत में शक्तियों के बँटवारे में एक और धारणा भी शामिल है जिसे नियंत्रण और संतुलन (checks and balances) की व्यवस्था कहते हैं | इसका मतलब यह है कि कोई भी शाखा किसी दूसरी शाखा के काम को अपने हाथ में नहीं ले सकती (यानी आम नियम यह है कि न्यायपालिका क़ानून नहीं बना सकती है या फिर संसद विवादों पर न्यायिक फ़ैसले नहीं दे सकती है) | इस तरह हर शाखा दूसरी शाखाओं पर एक अंकुश बनाए रख सकती है और उसे रखना चाहिए (उदाहरण) |

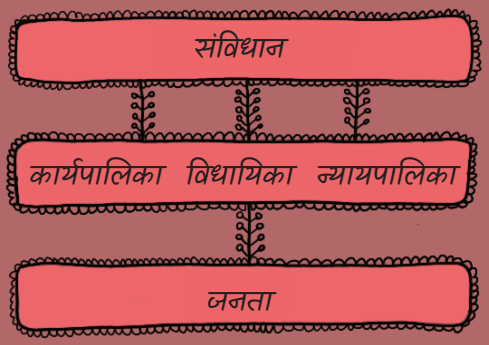

शक्ति के बँटवारे का एक दूसरा रूप संघवाद (Federalism) है | भारत जैसे जो देश सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक रूप से विविधता से भरे हैं, शासन के एक ही स्तर में सत्ता का केंद्रित होना उचित नहीं है | इसलिए शक्तियों को राज्य और संघीय सरकार के बीच दो स्तरों पर बाँटा गया है | इसलिए हमारे यहाँ एक संघीय सरकार है जिसके पास एक संसद, कार्यपालिका और भारत का सर्वोच्च न्यायालय है | इसके साथ-साथ हमारे यहाँ राज्य सरकारें हैं जैसे कि महाराष्ट्र, केरल, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल की राज्य सरकारें, जिनमें से हरेक के पास एक राज्य विधानसभा, एक राज्य सरकार, और एक उच्च न्यायालय है | इस तरह देश के अलग-अलग हिस्सों के लोगों का प्रतिनिधित्व न सिर्फ़ राज्य स्तर पर बल्कि संघीय स्तर पर भी होता है |

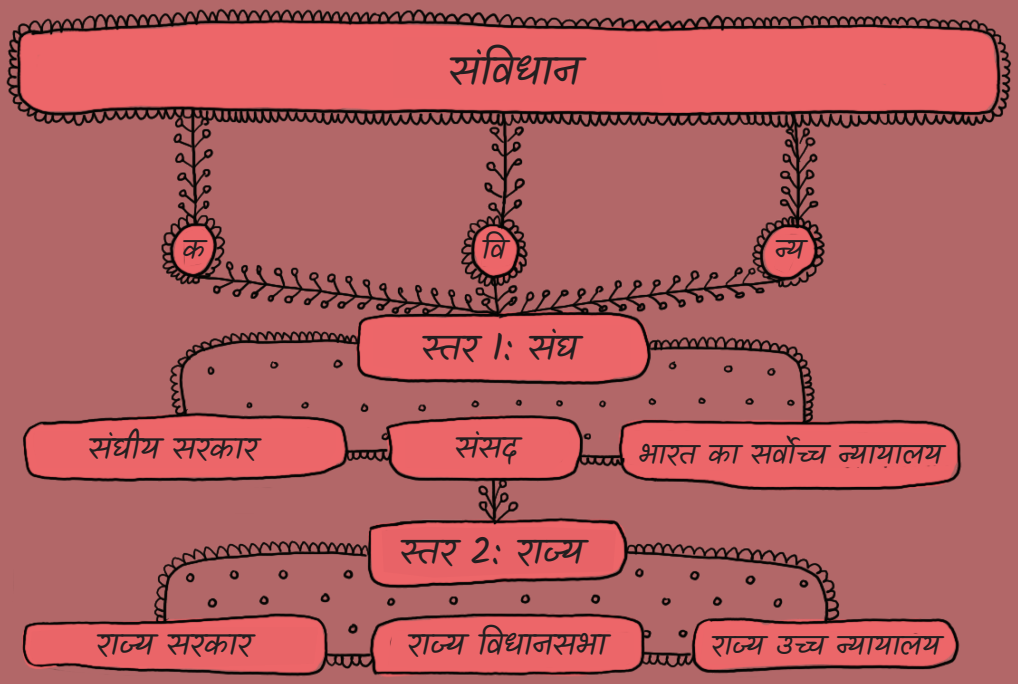

भारत के संविधान में यह बात कैसी दिखती है?

कई अलग-अलग विषयों पर क़ानून बनाने की ज़रूरत पड़ती है | लेकिन अनुच्छेद 246 के मुताबिक इन विषयों को संसदीय और राज्य विधानसभाओं के बीच बाँटा गया है | अगर आप इस प्रावधान को पढ़ें तो आप सातवीं अनुसूची तक पहुँचेंगे, जहाँ तीन 'सूचियाँ' दी गई हैं | सूची 1 संघीय सूची है | आप इसके विषयों को देखिए, इन सभी विषयों पर संसद क़ानून बना सकती है | सूची 2 राज्य सूची है | इसमें दिए गए सभी विषयों पर राज्य की विधानसभाएँ क़ानून बना सकती हैं | और अंत में सूची 3 है जिसके विषय संसद और विधानसभाओं के बीच साझे हैं |

मौलिक अधिकार

अब तक हमने संविधान के व्यापक ढाँचे को समझ लिया है | हमने संविधान को निर्देशित करने वाले सिद्धांतों को भी जान लिया है | इसलिए अब हम संविधान के सबसे अहम और जटिल भाग के बारे में जानते हैं | यह है भाग 3 |

हमारा सुझाव है कि आप यह करें:

पता लगाएँ कि भाग 3 में कितने अनुच्छेद हैं | आप संविधान की विषय सूची देख सकते हैं या फिर अनुच्छेद के पन्ने तब तक पलटते जाएँ जब तक आप भाग 4 पर न पहुँच जाएँ | (अनुच्छेद 12-35)

इस भाग 3 के सभी अनुच्छेदों के □शीर्षकों□ को पढ़ें | आप इन्हें हरेक प्रावधान के □विषय□ के रूप में समझ सकते हैं | क़ानूनी भाषा में, शीर्षक को □हाशिए की टिप्पणी□ (□□□□□□□□ □□□□) कहते हैं |

जब पहली बार पढ़ें: हरेक अनुच्छेद के पाठ को पढ़ें, लेकिन अनुच्छेद 32 पर आकर रुक जाएँ | लंबे वाक्यों और जटिल भाषा को लेकर परेशान न हों | हरेक अनुच्छेद में मोटे तौर पर क्या कहने की कोशिश की गई है, इसे समझें |

जब दूसरी बार पढ़ें: हरेक अनुच्छेद के पाठ को फिर से पढ़ें | इस बार गौर से पढ़ें, और जो भी शब्द आप नहीं जानते हों, या जो शब्द महत्वपूर्ण लग रहा हो, उस पर निशान लगाएँ |

अब इन सवालों के जवाब दें:

क्या आपको महसूस होता है कि अधिकारों को अलग-अलग पढ़ा जाना चाहिए, या फिर वे किसी तरह से आपस में जुड़े हुए हैं?

अधिकारों को जिस तरह लिखा या तैयार किया गया है, क्या उनमें कोई पैटर्न है?

अपने बारे में सोचें | आपको क्या लगता है कि कौन-से अधिकार आपके लिए सबसे अधिक मायने रखते हैं? अब अपने पड़ोसियों के बारे में सोचें | इसकी कितनी संभावना है कि उनका जवाब आपके इस जवाब से मेल खाएगा? तब क्या होगा तब आप जिस अधिकार को सबसे अधिक महत्व दे रहे हैं, वह उनके लिए सबसे महत्वपूर्ण अधिकार से टकरा जाए?

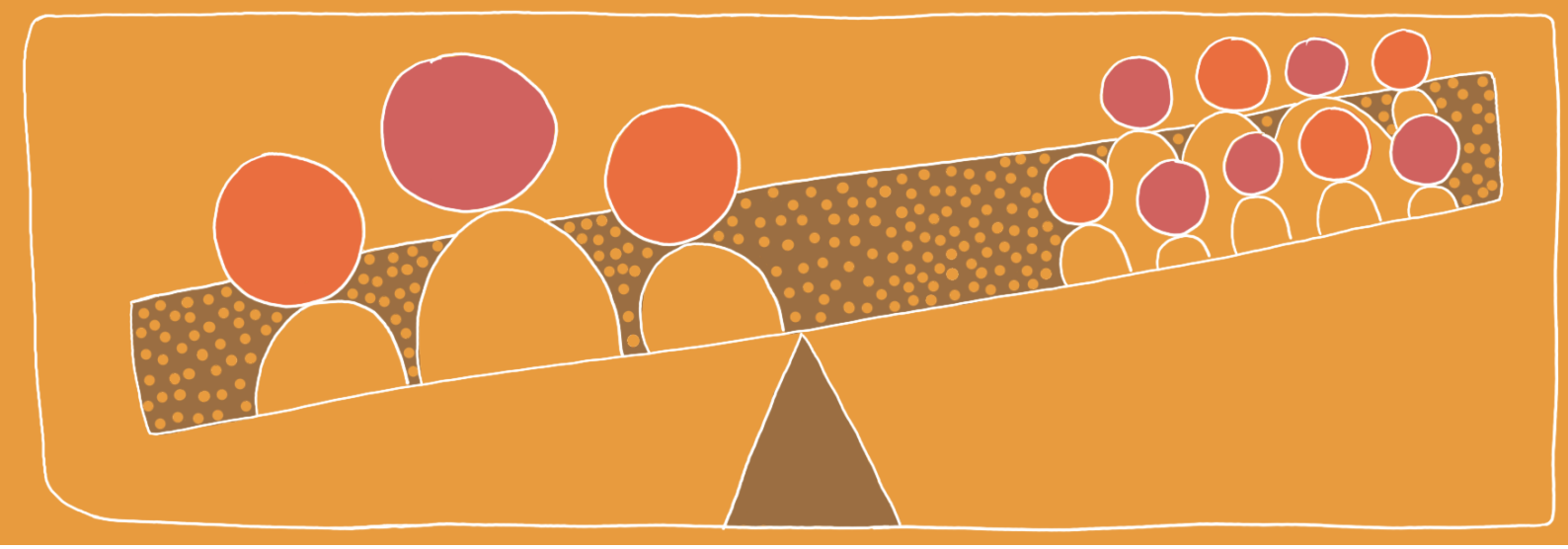

समानता का नियम - अनुच्छेद 14-18

इस भाग में हम संविधान के समानता के नियम की बात करेंगे |

एक आसान से सवाल से शुरू करते हैं | आपके लिए समानता शब्द का क्या मतलब है? जब आप कहते हैं कि दो चीज़ें समान हैं, तो हमारा मतलब यह है कि वे कुछ मामलों में एक ही हैं | गणित में यह बहुत आसान है जहाँ 2 = 2 होता है | लेकिन जब हम लोगों की बात करते हैं और यह कहते हैं कि दो लोग बराबर हैं, और उनसे बराबरी से पेश आते हैं तब गणित जैसी सटीक बराबरी का होना संभव नहीं है और न ही इसकी ज़रूरत है |

आइए इस बुनियादी विचार से शुरू करते हैं कि सभी लोग असल में पैदाइशी तौर पर समान होते हैं | लेकिन इस बुनियादी विचार में गड़बड़ी तब आने लगती है जब लोगों के जीवन के अनुभवों की हकीकत सामने आती है | हक़ीक़त में जाति, वर्ग, सेक्स, धर्म ऐसी कुछ चीज़ें हैं जो यह तय करती हैं कि कोई व्यक्ति समाज में कहाँ खड़ा है, उसकी हैसियत क्या है | ग़ौर कीजिए कि कोई भी व्यक्ति जब पैदा होता है, वह इन चीज़ों के साथ या उनके भीतर पैदा होता है | लेकिन ये चीज़ें और ऐसी कुछ दूसरी चीज़ें यह तय करती हैं कि व्यवहार में किन लोगों को समान माना जाएगा और किसी व्यक्ति के क्या अधिकार हैं | संविधान इस हालत का सामना कैसे करता है?

अनुच्छेद 14 कहता है:
क़ानून के आगे बराबरी: भारत के क्षेत्र के भीतर राज्य किसी भी व्यक्ति को क़ानून के आगे बराबरी (या समान व्यवहार) से या क़ानून की समान रूप से सुरक्षा से वंचित नहीं करेगा |

क़ानून के आगे बराबरी का मतलब यह है कि हरेक व्यक्ति पर क़ानून समान रूप से लागू होता है और इसका कोई भी अपवाद नहीं है | यह एक सीधा सा सिद्धांत है | लेकिन दूसरा बिंदु कुछ ज़्यादा जटिल है जो क़ानून से समान सुरक्षा की बात करता है |

आइए आसान बात से शुरू करते हैं | मान लीजिए कि हमारे सामने ऐसी एक स्थिति है:

“कक्षाएँ” स्कूलों में वर्षों का दूसरा नाम हैं - जैसे कि पहली कक्षा पहला साल, दूसरी कक्षा दूसरा साल, तीसरी कक्षा तीसरा साल, चौथी कक्षा चौथा साल | क्या आप पहली कक्षा के छात्र को चौथी कक्षा का गणित का सवाल हल करने के लिए देंगे?

इसको वर्गीकरण का सिद्धांत (doctrine of classification) कहते हैं | इसका मतलब यह कि समानता या बराबरी कोई स्थिर या ठहरी हुई अवधारणा नहीं है, जहाँ सभी लोगों और चीज़ों को एकसमान मान लिया जाता है चाहे उनकी स्थितियाँ और उनको हासिल साधन कैसे भी हों | जैसे कि अगर मेरी आमदनी 1000 रुपए है और आपकी 1,00,000 रुपए, तो क्या सरकार के लिए हमारी आमदनी पर 30% कर (टैक्स) लगाना उचित होगा?

इसी तरह वर्गीकरण के नतीजे में ट्रकों और कारों के लिए अलग-अलग गति सीमाओं, रिटायरमेंट की उम्र, कॉलेज में दाख़िले के लिए कट-ऑफ संबंधी नियम और कानून बनाना, और विशेष अपराधों के लिए विशेष अदालतों की स्थापना करना संभव होता है | अब अगर क़ानून ऐसा वर्गीकरण कर सकता है, तब क्या ऐसा कोई आधार होना चाहिए जिससे यह निश्चित किया जा सके कि ऐसे वर्गीकरण से किसी को नुक़सान न हो रहा हो?

किसी चीज़ या व्यक्तियों के समूहों का वर्गीकरण होने के लिए एक शर्त होती है | किसी व्यक्ति को जाति, सेक्स या धर्म जैसे कारकों के आधार पर उन्हें अलग-थलग करके, उन्हें बाहर रख कर नुक़सान पहुँचाने जैसे वर्गीकरण प्रतिबंधित हैं | जाति का उदाहरण लेते हैं | व्यक्तियों के पेशों के आधार पर उन्हें जन्म पर आधारित वर्गों में बाँटने वाली जाति व्यवस्था के नतीजे में समाज के हिस्सों के साथ बहुत ही अनुचित व्यवहार हुआ है | इसलिए संविधान का अनुच्छेद 17 जाति व्यवस्था का किसी भी तरह से पालन करने, और ख़ास तौर से छुआ-छूत का पालन करने को एक अपराध घोषित करता है | इसी तरह, अनुच्छेद 15 कहता है कि आम तौर पर जाति, सेक्स, धर्म या जन्मस्थान के आधार पर किसी के ख़िलाफ़ भेदभाव नहीं किया जा सकता है |

ऐसा कहने के साथ-साथ क़ानून के ऊपर ग़लतियों को सुधारने की ज़िम्मेदारी भी है | संविधान के समानता के नियम का एक अहम हिस्सा है सकारात्मक कार्रवाई (affirmative action) | सकारात्मक कार्रवाई ऐसे कदम हैं जिनके जरिए सरकार दो व्यक्तियों के बीच में मौजूद बराबरी की गारंटी करती है | संविधान सरकार को ऐसे विशेष प्रावधान बनाने की इजाज़त देता है, ताकि समाज के इन तबकों को विशेषाधिकार वाले तबकों की बराबरी में ले आया जा सके | इसका मकसद सामाजिक न्याय को सुनिश्चित बनाना है | हिंदी में सकारात्मक कार्रवाई को आम तौर पर आरक्षण के नाम से जाना जाता है |

संविधान में जिन अन्य मौलिक अधिकारों की गारंटी की गई है, उनको देखें | हमने बराबरी के अधिकार के मामले में अभी जैसा किया है, उसी तरह हरेक अधिकार के पीछे जो सिद्धांत काम कर रहे हैं उनको पहचानने की कोशिश करें |

सामान्य नियम और सोचने के लिए अभ्यास

शुरुआती सेक्शनों में आपने इस पर विचार किया कि एक देश के लिए एक संविधान का क्या मतलब होता है और इसका क्या काम है | आपने मौलिक अधिकारों पर सबसे अहम सेक्शन को निर्धारित करने वाले सिद्धांतों के बारे में भी सोचा | जब आप संविधान को पढ़ें तो नीचे कही गई बातों का ध्यान रखें और फिर उनके बाद दिए गए अभ्यासों पर सोचें -

अब आप इन सवालों पर सोचिए:

- क्या संविधान ठहरा हुआ है, यानी यह कभी नहीं बदलता? क्या इसे कभी नहीं बदलना चाहिए? या इसे समय के साथ विकसित होना चाहिए?
- क्या संविधान का मतलब सिर्फ़ उन शब्दों में है जिन्हें आप पढ़ते हैं या उससे बढ़ कर कुछ है?
- इन शब्दों का क्या मतलब होता है, इसका फ़ैसला कैसे किया जाता है?
- इसका फ़ैसला कौन करता है?

- भारतीय संविधान के मौलिक अधिकारों को पढ़ना और समझना क़ानून बनाने की एक ऐसी प्रक्रिया को समझना है, जिसमें व्यक्ति, समाज और राज्य के परस्पर प्रतिस्पर्धी हितों में एक संतुलन बनाने की कोशिश की जाती है | ये हमेशा एक दूसरे से मेल नहीं खाते हैं, और जब भी कभी उनके बीच में टकराव की नौबत आती है, तब समझने के लिए संविधान के नज़रिए को पेश करने वाली उसकी प्रस्तावना को देख सकते हैं जिस पर शुरुआत में हमने बात की थी |

- हमेशा ही इस बात पर बहस हो सकती है कि क्या न्यायसंगत, उचित और तर्कसंगत है | लेकिन अच्छी बात यह है कि प्राकृतिक न्याय (Natural Justice) जैसी एक धारणा भी मौजूद है | प्राकृतिक न्याय स्वयंसिद्ध सच्चाइयों का एक समूह (set) होते हैं कि मृत्यु दंड या क़ैद जैसी किसी तरह की सज़ा पाने की संभावना वाले लोग कैसी उम्मीद करेंगे कि उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाए | अपने आप में स्वयंसिद्ध सच्चाइयों की धारणा को समझने के लिए आइए थोड़ी देर आँखें बंद करें और सोचें (क) कितने लोग मरने के अधिकार का समर्थन करते हैं और (ख) कितने लोग सज़ा सुनाए जाने से पहले चाहते हैं कि उनके पक्ष को रखने का अधिकार हो | आप पाएँगे कि पहले मामले में लोगों के विचार बहुत बँटे हुए होंगे, लेकिन दूसरे में सबकी राय समान होगी |

आगे के अध्यायों को पढ़ते हुए आप देखेंगे कि व्यवहार में संविधान कैसे काम करता है - अदालतों में, क़ानून लागू करने के मामले में और क़ानून बनाने वालों के मामले में | आप जब इसे पढ़ रहे हों तो यह देखने के लिए वापस इस अध्याय को फिर से देख सकते हैं ताकि इस पर सोच सकें कि यहाँ हमने जिन सिद्धांतों की चर्चा की है क्या वे दूसरे अध्यायों में मिलते हैं |

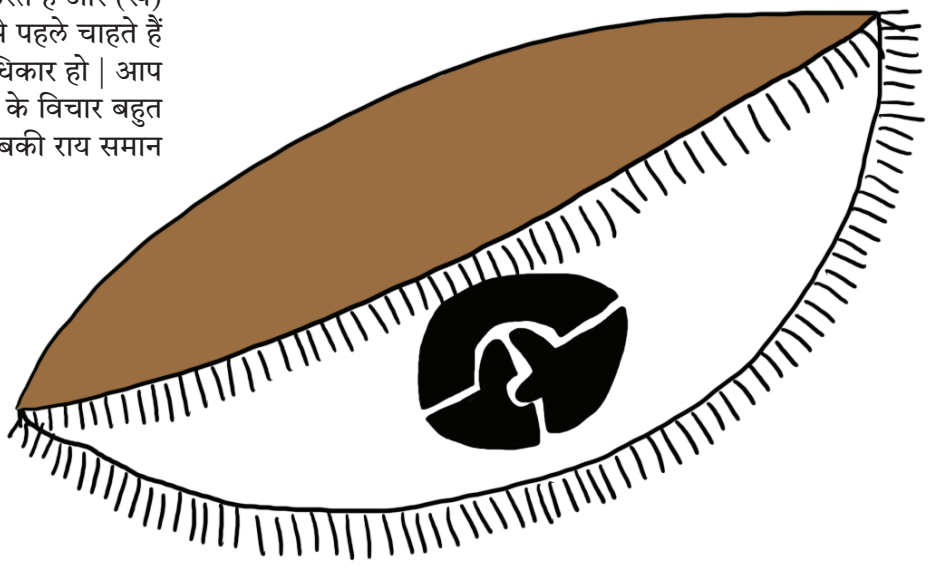

शब्दावली

संविधान के अनुच्छेद:
ये सरकार, मौलिक अधिकारों और नागरिकों के कर्तव्यों के विभिन्न पहलुओं की रूपरेखा पेश करने वाले सेक्शन हैं जिनको संख्याओं के साथ जाना जाता है.

संविधान की अनुसूचियाँ:
ये विभिन्न प्रशासनिक और विधायी मामलों के बारे में विवरण देने वाले हिस्से हैं जिन्हें संविधान में जोड़ा गया है.

समाजवादी:
यह एक ऐसा सिद्धांत है जो कहता है कि सरकार को आर्थिक ग़ैरबराबरी को घटाने और सभी नागरिकों की ख़ुशहाली और भलाई को सुनिश्चित करने के लिए काम करना चाहिए.

धर्मनिरपेक्ष:
यह संविधान का एक और मौलिक सिद्धांत है जो कहता है कि भारत का कोई आधिकारिक धर्म नहीं है और यह धार्मिक आज़ादी और सहिष्णुता को बढ़ावा देता है.

मौलिक अधिकार:
बुनियादी अधिकारों और आज़ादियों का एक समूह जो सुरक्षित हैं और हरेक नागरिक के लिए उनकी गारंटी की गई है जैसे कि समानता का अधिकार, बोलने की आज़ादी, और जीवन का अधिकार.

कार्यपालिका:
सरकार की वह शाखा जिस पर क़ानून को लागू करने और देश को चलाने की ज़िम्मेदारी है. इसमें राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल शामिल हैं.

विधायिका:
यह वह संस्था है जो क़ानून बनाने और उसे पारित करने के लिए ज़िम्मेदार है. भारत में संसद के दोनों सदन, राज्य सभा और लोक सभा, तथा राज्य की विधानसभाएँ इसका हिस्सा हैं..

न्यायपालिका:
क़ानून की व्याख्या करने और उसको बनाए रखने के लिए ज़िम्मेदार शाखा. भारत में न्यायपालिका में सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय और सभी दूसरी अदालतें इसमें आती हैं.

अध्याय 3
क़ानून की अदालत
आपके अधिकारों को लागू करते हुए

किसी समय उत्तर भारत के एक छोटे-से गाँव में मनोज नाम का एक किसान रहता था. वह अपने खेत में कड़ी मेहनत करता था और फसलें उगाने में उसने बहुत सारा समय और पैसा अपने खेतों में लगाया. लेकिन उस साल मौसम ख़राब रहा और मनोज की फसलें बरबाद हो गईं. मनोज को भारी आर्थिक नुक़सान उठाना पड़ा.

यह एक अच्छी बात थी कि मनोज ने एक सरकारी बीमा कंपनी से फसल बीमा योजना ले रखी थी. उसने अपने मुआवज़े के लिए बीमा कंपनी से संपर्क किया. लेकिन कंपनी ने उसके दावे को कुछ तकनीकी कारण बताते हुए ख़ारिज कर दिया.

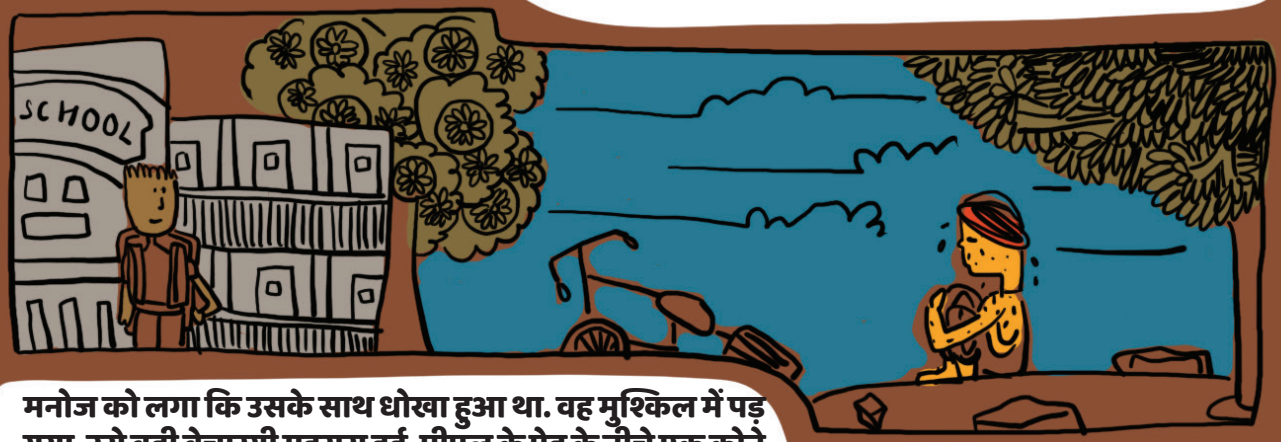

मनोज को लगा कि उसके साथ धोखा हुआ था. वह मुश्किल में पड़ गया, उसे बड़ी बेचारगी महसूस हुई. पीपल के पेड़ के नीचे एक कोने में मनोज को दुखी और परेशान देख कर विवेक ने उससे बात करने की कोशिश की. विवेक स्थानीय स्कूल में पढ़ने वाला एक लड़का था. उसने पूछा कि क्या वह मनोज की कोई मदद कर सकता है. मनोज ने अपनी कहानी विवेक को सुना दी.

विवेक को भी नहीं पता था कि ऐसे में क्या किया जा सकता था. उसे भी असहाय महसूस हुआ. लेकिन उसने इस घटना को अपने स्कूल के हेडमास्टर को बताया. उन्होंने विवेक से कहा कि सरकारी बीमा कंपनी के ख़िलाफ़ क़ानूनी विकल्पों को अपनाया जा सकता है. विवेक को पता नहीं था कि यह कदम कैसे उठाया जाए. तब हेडमास्टर ने मनोज से अपने स्कूली दिनों के एक दोस्त से मिलने को कहा. वे स्थानीय अदालत में एक न्यायालय सहायक थे. विवेक अगले दिन उनसे मिला और जानकारी ली. विवेक ने मनोज को तसल्ली दी और उसको स्थानीय अदालत जाने का आग्रह किया.

अदालत में कुछ वकीलों से मिलने के बाद मनोज को भी भरोसा हुआ और उसने अदालतों के ज़रिए इंसाफ़ हासिल करने का फ़ैसला किया. उसने स्थानीय उपभोक्ता फ़ोरम में एक मामला दाख़िल किया, जिसमें उसने अपने नुक़सान की भरपाई और अपने दावों को ग़लत तरीक़े से ख़ारिज करने के लिए बीमा कंपनी के ख़िलाफ़ कार्रवाई की माँग की. शुरू-शुरू में मनोज को कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा. उसके पास पैसे नहीं थे. क़ानूनी प्रक्रिया लंबी थी. लेकिन अपने अधिकारों के लिए लड़ने को लेकर उसका इरादा पक्का था. उसने अदालत में अपना पक्ष रखने के लिए एक वकील को भी रखा. विवेक को इससे ख़ुशी हो रही थी कि वह मनोज की मदद कर सका.

महीनों तक चली सुनवाई के बाद अदालत ने किसान की व्यथा को और उसके साथ होने वाले अन्याय की बात को क़बूल किया. जज ने आदेश दिया कि बीमा कंपनी मनोज को मुआवज़े का भुगतान करे. बीमा कंपनी ने अपील करने की कोशिश की, लेकिन ऊपर की अदालत ने ज़िला अदालत के फ़ैसले को क़ायम रखा. कंपनी को आदेश दिया गया कि वह मनोज को मुआवज़े का भुगतान करे.

मनोज की जीत सिर्फ़ एक व्यक्तिगत जीत नहीं थी. इसने उन दूसरे किसानों के लिए एक क़ानूनी राह खोल दी, जो अपनी फसल के बीमा दावों को लेकर ऐसे मुद्दों का सामना कर रहे थे. मनोज का मामला एक ऐसी मिसाल बन गया कि किस तरह क़ानून द्वारा दिए गए अधिकार और भारतीय अदालती व्यवस्था इंसाफ़ के लिए एक शक्तिशाली औज़ार हो सकते हैं. इसने विवेक को भी भारी प्रोत्साहन दिया, जो अब एक एनजीओ चलाता है. यह एनजीओ किसानों और दूसरे वंचित समूहों के लोगों को क़ानूनी मदद दिलाता है.

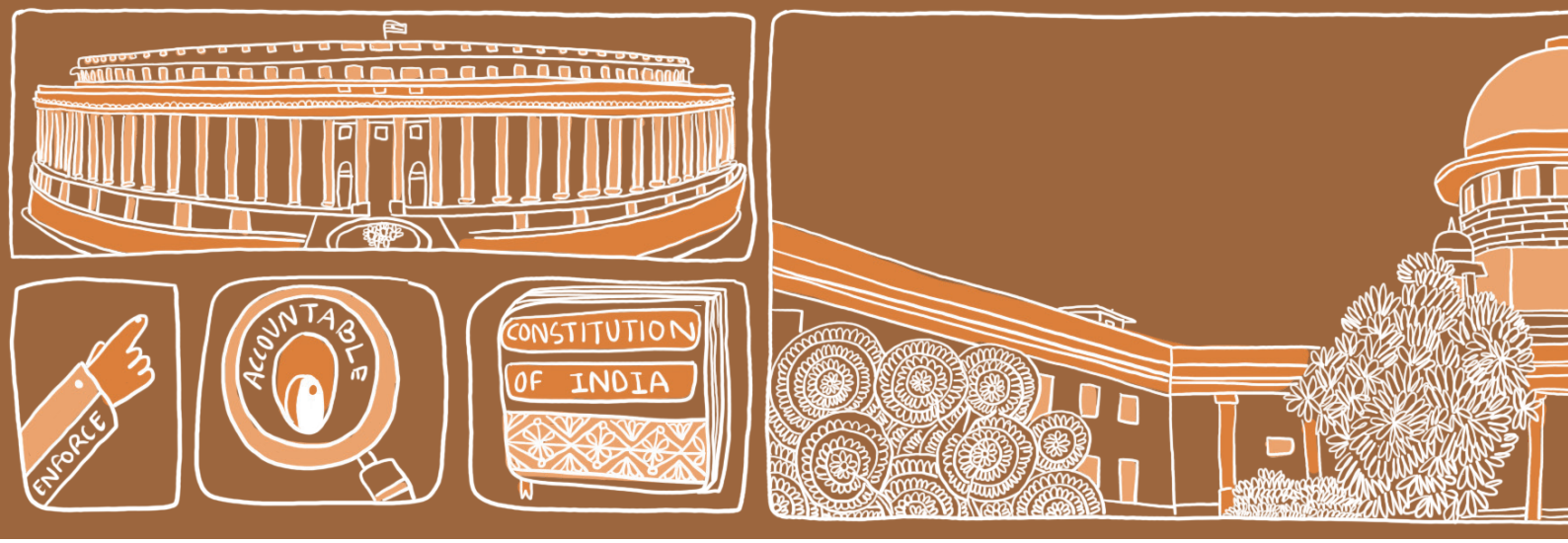

अदालतों का एक परिचय

मनोज की कहानी प्रेरणादायक है, लेकिन यह कई सवाल भी खड़े करती है. विवेक वयस्क नहीं था, ऐसे में क्या वह सीधे अदालत जा सकता था? क्या विवेक मनोज के लिए मामला दायर कर सकता था? क्या इस मामले को जनहित में दायर किया जा सकता था? क्या यह एक जनहित का मामला है?

अदालतें हतोत्साहित कर सकती हैं, उनसे डर भी लग सकता है. अगर आपने कभी सचमुच की अदालत देखी हो तो आप गौर करेंगे कि हर कोई व्यस्त दिखता है, हर कोई बहुत महत्वपूर्ण लगता है. वहाँ कई क़िस्म के नियम और पाबंदियाँ होती हैं और एक बाहरी इंसान को वहाँ गंभीरता से लिया जाना मुश्किल है. ख़ास कर अगर वह कोई कम उम्र का इंसान हो. क्या आपको लगता है कि यह जगह आपके लिए नहीं बनी है?

अदालतें उस ढाँचे का हिस्सा हैं जिससे एक जीवंत और सबको साथ लेकर चलने वाला लोकतंत्र बनता है. नागरिकों के बीच आपसी रिश्ते और नागरिकों और सरकार के बीच के रिश्ते और उनके अधिकारों को क़ानूनों के ज़रिए ही अमल में लाया जाता है. अदालतें इन्हीं क़ानूनों को लागू करने के लिए ज़िम्मेदार हैं. लोगों से उम्मीद की जाती है कि वे अदालतों का इस्तेमाल करते हुए सरकार और चुने हुए जन प्रतिनिधियों को जवाबदेह बनाएँगे. अदालतें सरकार की कार्रवाइयों की समीक्षा करते हुए, आज्ञापत्र (writ) जारी करते हुए, मौलिक अधिकारों को लागू करते हुए इस काम को अंजाम देती हैं. इस काम में वे नागरिकों के लिए यह संभव बनाती हैं कि वे जनहित याचिकाओं (अर्थ के लिए शब्दावली देखें) के ज़रिए अदालतों के पास आ सकते हैं. यह तंत्र सुनिश्चित करता है कि सरकार अपने कामकाज में क़ानून और संविधान का पालन करे और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करे. क़ानून बनाना सरकार का काम है, और अदालतों का काम यह पक्का करना है कि क़ानून लागू हो. अदालत किसी भी लिहाज़ से सरकार की भागीदार नहीं है. इससे उम्मीद की जाती है कि वह स्वतंत्र रूप से काम करेगी. क़ानून के शासन को मज़बूत बनाते हुए और नागरिकों के अधिकारों का बचाव करते हुए, अदालतें लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देने में मदद कर सकती हैं. वे यह पक्का करती हैं कि इंसाफ़ तक सबकी पहुँच हो सके.

लेकिन रोज़मर्रा के जीवन में ये सिद्धांत कैसे काम करते हैं? विवेक को जिस तरह रास्ता नहीं सूझ रहा था, वह हालत कइयों की हो सकती है. अगर आपको कुछेक बुनियादी बातें पता हों तो इससे मदद मिल सकती है.

अनुच्छेद 39A

अदालतों के बारे में जानने से पहले यह याद रखें कि भारतीय संविधान में क़ानूनी सलाह और मदद के अधिकार को एक मौलिक अधिकार कहा गया है. क़ानूनी मदद में पुलिस थाने से लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक न्यायिक प्रक्रिया की सभी अवस्थाओं में मुफ़्त क़ानूनी सलाह, प्रतिनिधित्व, और मदद शामिल है. संविधान के अनुच्छेद 39A के तहत राज्य की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वह मुफ़्त क़ानूनी मदद मुहैया कराते हुए यह सुनिश्चित करे कि कोई व्यक्ति आर्थिक या दूसरी वजहों से इंसाफ़ से वंचित न रह जाए.

भारत में सभी नागरिकों को क़ानूनी मदद का अधिकार हासिल है, जिसमें महिलाएँ, बच्चे, अनुसूचित जातियों और जनजातियों

के सदस्य और समाज के हाशिए पर दूसरे तबके शामिल हैं जो क़ानूनी सेवाओं का खर्च नहीं उठा सकते हों.

इस संवैधानिक आदेश को क़ानूनी रूप देते हुए क़ानूनी सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987 ने इसे प्रभावी बनाया है. इस अधिनियम के ज़रिए राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर क़ानूनी सेवा प्राधिकार बनाए गए ताकि ज़रूरतमंद लोगों की क़ानूनी मदद पहुँचाई जा सके. आपराधिक (फ़ौजदारी) मामलों में अगर किसी आरोपित व्यक्ति के पास वकील का ख़र्च उठा सकने की क्षमता नहीं हो तो अदालत उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए एक वकील नियुक्त कर सकती है. दीवानी मामलों में उन लोगों को क़ानूनी मदद पहुँचाई जाती है जो मुक़दमे के खर्चे नहीं उठा सकते हैं.

क्या आप उस क़ानूनी सेवा प्राधिकार की पहचान कर सकते हैं जो आपके राज्य, ज़िले या तहसील में क़ानूनी मदद मुहैया कराता है?

दस्तावेज़, लोग, विधियाँ

तो मान लीजिए आपको अदालत के पास जाना है. आप तैयारी कैसे करेंगे?

(क) दस्तावेज़: अदालत के सामने अपना मामला साबित करने के लिए जो सबसे चुनौतीपूर्ण काम है वह है दस्तावेज़ों को तैयार करना. कई बार ऐसा होता है कि मामले लिखित दस्तावेज़ों पर आधारित नहीं होते हैं. और ऐसे हालात में यह याद रखना अहम है कि कौन लोग गवाह होंगे और उनके बयान से क्या साबित होगा. इसलिए वकील से संपर्क करने से पहले अगर संभव हो तो सभी ज़रूरी काग़ज़ों को जमा करें जिनके आधार पर आप अपना मामला पेश करना चाहते हैं. अगर मामला सरकार के ख़िलाफ़ हो और जहाँ किसी सरकारी कर्मी/अधिकारी से किसी कार्रवाई की अपेक्षा हो, तो अदालत से संपर्क करने से पहले यह महत्वपूर्ण है कि उन्हें भी एक पत्र भेजा जाए. या फिर सरकारी अधिकारी के नाम एक आवेदन (पद के आधार पर) भेज कर उनसे माँग करें कि वे अपने पद से जुड़ा कर्तव्य निभाएँ. यह याद रखें कि क़ानून आपसे अपेक्षा करता है कि ऐसा एक आग्रह करने के बाद अगर आपकी समस्या का समाधान नहीं होता है तो आप एक उचित अवधि के भीतर अदालत से संपर्क करें.

(ख) क़ानूनी स्थिति: अदालत से कौन संपर्क कर सकता है, इस बारे में स्थिति संबंधी नियम को उदार बनाया गया है. इसके बावजूद संपत्ति, निजी नुकसान, अपराध और सेवा-रोज़गार संबंधी मामलों में अदालत यह अपेक्षा करती है कि शिकायतकर्ता ख़ुद अदालत से संपर्क करें. एक तीसरा व्यक्ति या पक्ष तभी अदालत के पास जा सकता है अगर मामला व्यापक जनहित का हो. जैसे कि अगर किसी गाँव में एक सार्वजनिक स्कूल की इमारत पर किसी ने क़ब्ज़ा करके उसमें अपना अनाज रख दिया हो, तब कोई भी व्यक्ति इसके ख़िलाफ़ अदालत जा सकता है.

(ग) जनहित याचिका (पीआईएल): भारतीय न्यायिक व्यवस्था में पीआईएल को एक ऐसी विशेषता के रूप में अपनाया गया है जो एक

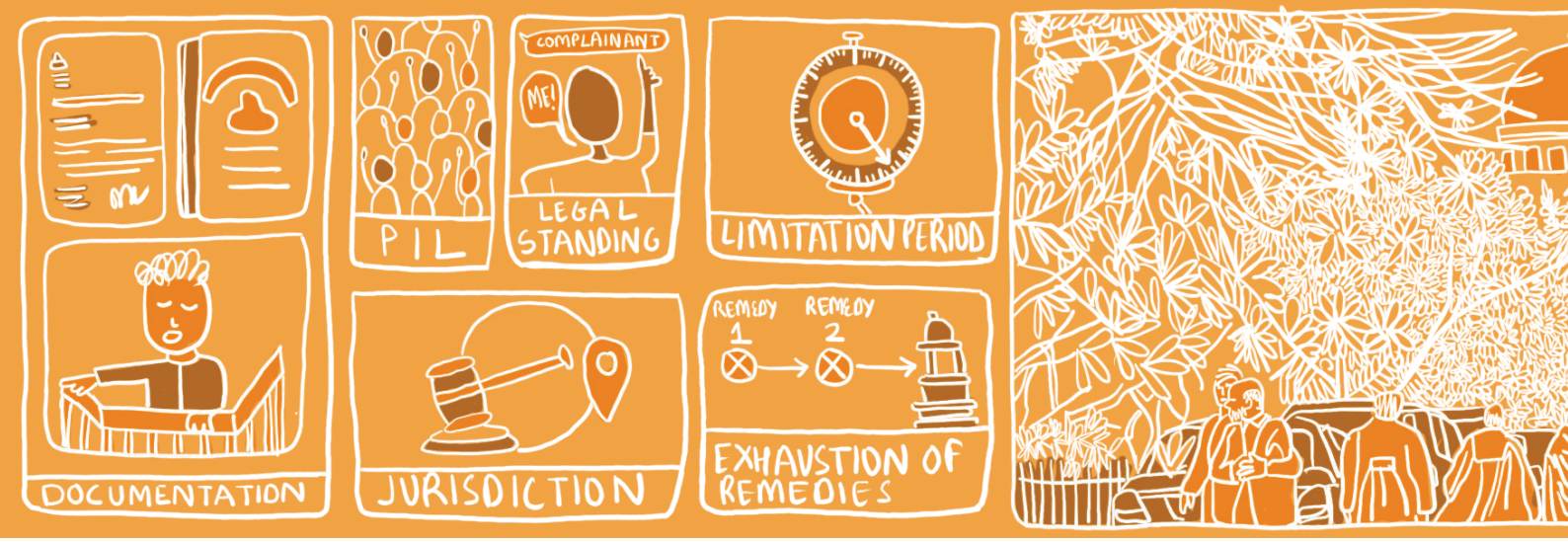

साधारण इंसान को उच्च या सर्वोच्च न्यायालय से निर्देश लेने की इजाज़त देता है, भले ही उस व्यक्ति का कोई निजी हित इस मामले से न जुड़ा हो. इस व्यवस्था का उपयोग पर्यावरण, इंटरनेट बंद करने, क़ानून की वैधता, न्यायिक आज़ादी, राजनीतिक दलों के लिए चंदे और भ्रष्टाचार आदि मामलों में किया गया है.

(घ) न्यायिक अधिकार क्षेत्र: अब अगली शर्त यह है कि आपको यह याद रखना है कि किस अदालत से संपर्क किया जाए. इसको देखने के दो तरीक़े हैं. पहला तरीका, आप जो समाधान चाहते हैं उसके आधार पर आपको फ़ैसला करने की ज़रूरत है कि क्या आपको स्थानीय अदालत के पास जाना चाहिए, या उच्च न्यायालय या किसी ट्रिब्यूनल के पास. दूसरा तरीक़ा, आपका मामला जिस जगह से जुड़ा हुआ है और जितनी रक़म का मामला है, इस बात पर यह निर्भर करेगा कि इस मामले की सुनवाई करना किस अदालत के अधिकार क्षेत्र में आता है. जैसे कि अगर कोई संपत्ति लखनऊ में है तो इसके बारे में बेंगलुरु में मामला दाख़िल करना मुमकिन नहीं है.

(च) समय सीमा: किसी मामले को दाख़िल करने की एक विशेष अवधि निर्धारित है और इसे उसी के भीतर किया जा सकता है. इसे सीमित अवधि या समय सीमा कहा जाता है. क़ानून यह अपेक्षा करता है कि कोई मामला तयशुदा अवधि के भीतर ही दाख़िल किया जाए, वरना तयशुदा समय सीमा बीत जाने के बाद अदालत उस मुक़दमे की सुनवाई नहीं करेगी.

(छ) समाधान के दूसरे उपाय आज़माए जा चुके हों: कुछ मामलों में यह ज़रूरी है कि अदालत के पास जाने से पहले समस्या के समाधान के दूसरे उपायों को आज़माया जा चुका हो. जैसे कि श्रम संबंधी विवादों में पक्षों के लिए अदालत में मामला दाखिल करने से पहले संवाद और मध्यस्थता की कोशिश करना ज़रूरी हो सकता है.

अवयस्कों के लिए अदालत पहुँचने पर कोई रोक नहीं है, लेकिन मामले को किसी क़ानूनी संरक्षक (□□□□□□□□) या करीबी दोस्त के ज़रिए ही दाखिल करना होगा.

इंसाफ़ और अदालतों तक पहुँच के मुद्दों को दूर करने के लिए अदालतों ने □चिट्ठी से याचिका□ की पद्धति खोजी है. चिट्ठी से याचिका के अधिकार क्षेत्र के तहत, उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय मामले की सुनवाई कर सकते हैं, मामले की छानबीन और जाँच करवा सकते हैं, और उचित आदेश जारी कर सकते हैं या फिर इससे संबंधित संस्थाओं या व्यक्तियों को मुद्दे को हल करने के लिए निर्देश दे सकते हैं.

कौन-सी अदालत?

भारत में अदालती व्यवस्था एक जटिल जाल की तरह दिखाई पड़ सकती है, लेकिन इस अस्त-व्यस्तता में एक व्यवस्था निहित है. हरेक अदालत एक सीढ़ीदार व्यवस्था पर आधारित है, जो महत्वपूर्ण है. यही व्यवस्था यह तय करती है कि किस तरह के मामलों की सुनवाई हो सकती है और अगर उनकी अपील करने की ज़रूरत पड़ी तो कहाँ जाया जा सकता है.

ज़्यादातर अदालतें कोड ऑफ सिविल प्रोसीजर, 1908 के तहत क़ायम हुई हैं और इस कोड का, आपराधिक दंड विधान और भारत का संविधान का पालन करती हैं. इनसे अलग कुछ ऐसी अदालतें भी हैं जिन्हें कुछ विशेष अधिनियमों के तहत क़ायम किया जाता रहा है.

देश के विभिन्न उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय संवैधानिक अदालतें हैं. इसका मतलब यह है कि इस बात को सुनिश्चित बनाने के लिए उनके पास व्यापक शक्तियाँ हैं कि किन्ही क़ानूनों ने मौलिक अधिकारों का हनन किया है या नहीं. विशेष अधिनियमों के तहत क़ायम की गई दूसरी अदालतें एक बहुत विशेष ज़िम्मेदारी निभाने के लिए बनी होती हैं और वे उस विषय से संबंधित क्षेत्र से जुड़ी होती हैं, जैसे कि पारिवारिक मामले, कंपनियों का दिवालिया होना, बीमा, वगैरह.

ट्रिब्यूनल अपनी प्रकृति में अर्ध न्यायिक संस्थान हैं और उन्हें किसी तयशुदा विषय वस्तु से निबटने के लिए बनाया जाता है. अदालती व्यवस्था में मुक़दमों के बहुत समय तक लंबित रहने के हल के लिए और कारगरता को बढ़ाने के लिए इनको क़ायम किया गया. ट्रिब्यूनल कर, भूमि सुधार, किराया और किरायेदारों के अधिकारों और पर्यावरणीय मामलों तक को देखते हैं.

अपने मुहल्ले में घूमें और लोगों से अपनी सबसे करीबी अदालत के बारे में बातें करें. आप इंटरनेट की मदद भी ले सकते हैं. आपके सबसे नज़दीक कौन-सी अदालत है और यह नीचे दी गई अदालती सीढ़ीदार व्यवस्था में कहाँ पर मौजूद है? उच्च न्यायालय अपने नीचे आने वाली सभी अदालतों को सुपरवाइज़ करती है, लेकिन उच्च न्यायालय किस अदालत के मातहत आता है?

सर्वोच्च न्यायालय
उच्च न्यायालय
राज्य स्तर पर
जिला स्तर पर मातहत अदालतें
महानगरीय अदालतें
जिला व सत्र न्यायालय
दिवाणी
फ़ौजदारी
दिवाणी
फ़ौजदारी
दीवानी नगर न्यायालय
सत्र न्यायालय (सत्र न्यायाधीश)
जिला न्यायालय (जिला न्यायाधीश)
सत्र न्यायालय (सत्र न्यायाधीश)
छोटे मामलों संबंधी अदालतें
मुख्य महानगरीय न्यायालय (मुख्य महानगरीय न्यायाधीश)
उप न्यायालय (वरिष्ठ दीवानी न्यायाधीश)
न्यायिक मजिस्ट्रेट अदालत (फ़र्स्ट क्लास) (मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट)
महानगरीय मजिस्ट्रेट अदालतें (महानगरीय मजिस्ट्रेट फ़र्स्ट क्लास)
मुख्य जूनियर दीवानी न्यायाधीश कोर्ट (मुख्य जूनियर सिविल जज)
न्यायिक मजिस्ट्रेट कोर्ट (सेकंड क्लास) (न्यायिक मजिस्ट्रेट सेकंड क्लास)
मुन्सिफ अदालत (जिला मुन्सिफ, या जूनियर सिविल जज)

आज्ञापत्र, अधिकार और हल

संविधान में उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय को एक बहुत अहम जगह दी गई है. उनके पास अपील की जा सकती है, यह तो उनके अधिकार क्षेत्र में आता ही है, उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के पास आज्ञापत्र जारी करने की शक्ति भी है. अंग्रेज़ी में इन्हें रिट (writ) कहा जाता है. ये आज्ञापत्र सरकारी कामकाज के संदर्भ में अदालतों द्वारा विशेष दिशा-निर्देश होते हैं और कोई भी नागरिक इनकी माँग कर सकता है.

उच्च न्यायालयों के पास संविधान की व्याख्या करने की शक्ति है. वे यह तय कर सकती हैं कि क़ानून और कार्यपालिका की कार्रवाइयाँ संविधान के मुताबिक़ वैध हैं या नहीं. यह एक अहम भूमिका है, क्योंकि यह सुनिश्चित करता है कि क़ानून और कार्रवाइयाँ संविधान के मुताबिक़ चल रही हैं और यह नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करता है. जैसे कि जब मेनका गांधी के पासपोर्ट को वापस लेकर विदेश यात्रा करने के उनके अधिकार को सीमित कर दिया गया था, तो उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय के पास जाकर यह माँग की कि क़ानून के ज़रिए यात्रा के अधिकार को एक मौलिक अधिकार घोषित किया जाए. यह माँग भी की कि क़ानून की समुचित प्रक्रिया का पालन किए बिना सरकार इस अधिकार को सीमित नहीं कर सकती है.

संविधान के बारे में पिछले अध्याय पर वापस जाएँ और मौलिक अधिकारों वाले सेक्शन में देखें कि कौन से अधिकार आज्ञापत्रों के ज़रिए हासिल हुए हैं.

बंदी प्रत्यक्षीकरण: किसी भी व्यक्ति को हिरासत में नहीं रखा जा सकता है, ऐसा सिर्फ़ तभी किया जा सकता है जब कानूनी प्रक्रियाओं का पालन करके हिरासत में लिया गया हो. अगर किसी व्यक्ति को क़ानूनी तरीक़े के बिना किसी निजी व्यक्ति द्वारा या किसी सरकारी एजेंसी द्वारा हिरासत में रखा गया है तो आप बंदी प्रत्यक्षीकरण के आज्ञापत्र की माँग कर सकते हैं. उच्च न्यायालय में ऐसी रिट याचिकाओं की सुनवाई में पुलिस से उम्मीद की जाती है कि वे ऐसे व्यक्ति को खोज कर या उनका पता लगा कर पेश करेंगे. लेकिन अगर कोड ऑफ़ क्रिमिनल प्रोसीज़र, 1973 के तहत पुलिस को दी गई शक्तियों के तहत किसी व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया हो या निरोधक हिरासत में लिया गया हो, तो रिट की याचना नहीं की जा सकती है.

परमादेश: इस रिट याचिका का उपयोग सरकारी कर्मियों या संगठनों को अपना उचित तरीक़े से करने या क़ानून के मुताबिक़ ज़रूरी बनाए गए अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए बाध्य करने की ख़ातिर किया जाता है. अगर क़ानून में किसी कर्तव्य को तय किया गया है, तब आप उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के पास जाकर उस व्यक्ति को अपना कर्तव्य निभाने के लिए बाध्य करने की माँग कर सकते हैं. परमादेश हासिल करने के लिए रिट याचिका दायर करने की पूर्व शर्त यह है कि पहले आप उस व्यक्ति से संपर्क करके उसे अपना कर्तव्य निभाने का

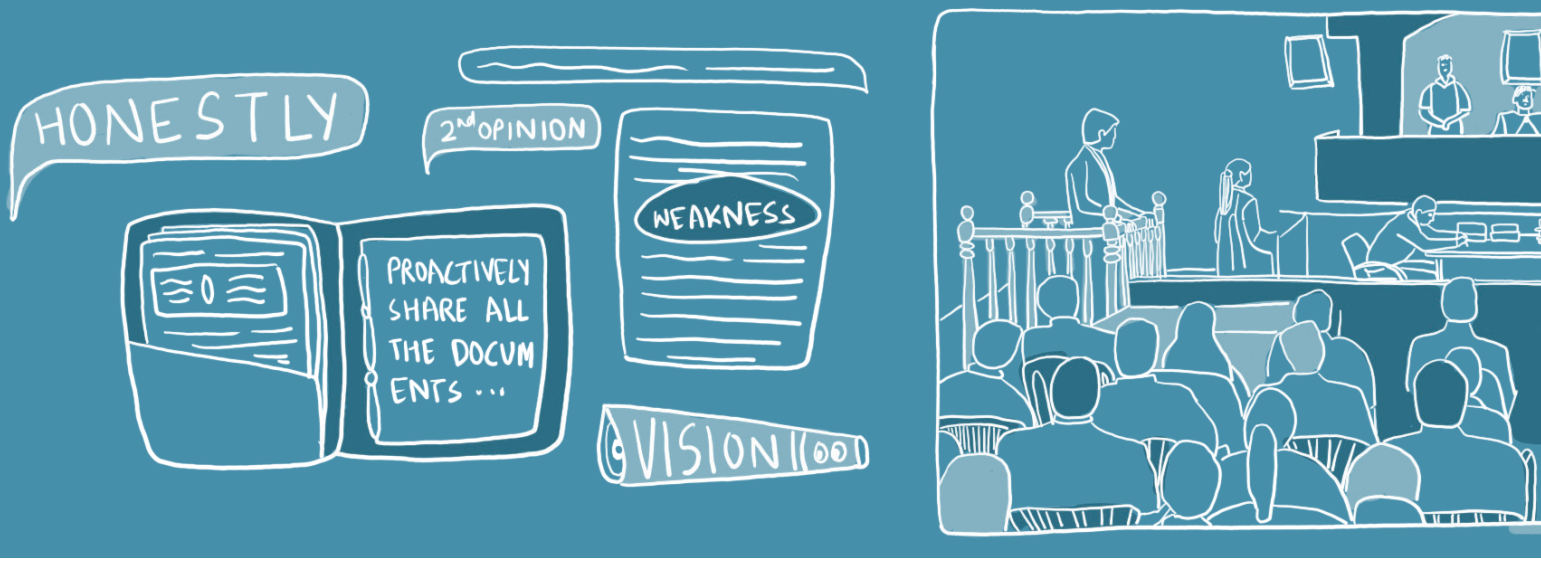

आग्रह करें. इसके बाद ही आप उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के पास जा सकते हैं.

उत्प्रेषण: इस रिट का उपयोग अधिकारियों या मातहत अदालतों या ट्रिब्युनलों के फैसलों को चुनौती देने के लिए किया जाता है. इसमें ऊँची अदालतों से उन फ़ैसलों की समीक्षा करने और उन्हें सुधारने की माँग की जाती है. याद रखें कि अगर लिए गए फैसले की समीक्षा करने का कोई और क़ानूनी उपाय मौजूद है, तो आप उच्च न्यायालय में यह रिट याचिका दायर नहीं कर सकते हैं. जैसे कि मान लीजिए अगर आप ज़िला उपभोक्ता फोरम के किसी फ़ैसले को चुनौती देना चाहते हैं, तो इसके लिए आप सीधे उच्च न्यायालय में रिट याचिका नहीं दाख़िल कर सकते हैं. आपको पहले राज्य उपभोक्ता शिकायत निबटारा आयोग में अपील करना होगा.

निषेध: इस रिट का उपयोग निचली अदालतों और ट्रिब्यूनलों को ऐसे फ़ैसले लेने से रोकने के लिए किया जाता है, जो उनके क़ानूनी प्राधिकार से बाहर हैं.

अधिकार पृच्छा: इस याचिका का उपयोग सार्वजनिक कर्मियों/अधिकारियों के प्राधिकार पर सवाल उठाने के लिए किया जाता है. इसके तहत उनसे पूछा जा सकता है कि वे अपने पद पर होने के अधिकार को साबित करें. जैसे कि अगर कोई व्यक्ति किसी विशेष पद पर नियुक्त हुआ हो लेकिन वह इसकी पात्रता पूरी न करता हो, तब आप उस व्यक्ति के ख़िलाफ़ उच्च न्यायालय के पास जाकर अधिकार पृच्छा की रिट याचिका दायर कर सकते हैं. रिट के सभी प्रकारों में अधिकार पृच्छा रिट याचिका में कानूनी स्थिति का नियम सबसे लचीला है.

किसी वकील से मिलना

वकील बहुत जानकार लोग होते हैं और कभी कभी वे बहुत व्यस्त होते हैं. वकीलों से मिलने में मुमकिन है कि आप डर और हतोत्साहित महसूस करें. अगर आप पहली बार किसी वकील से मिल रहे हों, तो निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें:

(क) वकीलों की भूमिका आपकी मदद करने और अदालत के सामने आपका मामला पेश करने की है. वे तभी आपकी मदद कर सकते हैं अगर आप उनकी मदद करें. इसलिए आपको अपने वकील के साथ ईमानदार होना चाहिए और उनके सवालों के जवाब सावधानी से देने चाहिए.
(ख) आपके पास मामले से संबंधित जो भी दस्तावेज़ हों आप ख़ुद उन्हें अपने वकीलों को सौंपें. वे कितने प्रासंगिक हैं इसका फ़ैसला आप न करें, वकीलों पर छोड़ दें.
(ग) अपने वकील को बताएँ कि आप इस मामले से किस तरह का हल चाहते हैं.
(घ) कभी-कभी वकील आपको आपके मामले की कमज़ोरी के बारे में भी बताएंगे. यह एक अच्छा संकेत है, क्योंकि वकील आपके मामले में दिलचस्पी ले रहे हैं और आपके साथ ईमानदारी से पेश आ रहे हैं.
(च) अगर आप ख़र्च उठा सकते हों तो किसी दूसरे वकील से सलाह लेने में न हिचकें.

अगर आप वकील का ख़र्च नहीं उठा सकते हैं लेकिन आप यह भी नहीं चाहते कि आप सरकारी वकील की मदद लें या सरकारी क़ानूनी मदद लें तो आप ख़ुद अपना वादी यानी 'लिटिगंट इन पर्सन' बन सकते हैं. लिटिगंट इन पर्सन वे लोग होते हैं जो सुसंगत तरीक़े से सोचते हैं और अपनी समस्या को क़ानूनी रूपरेखा के साथ अदालत के सामने पेश कर सकते हैं.

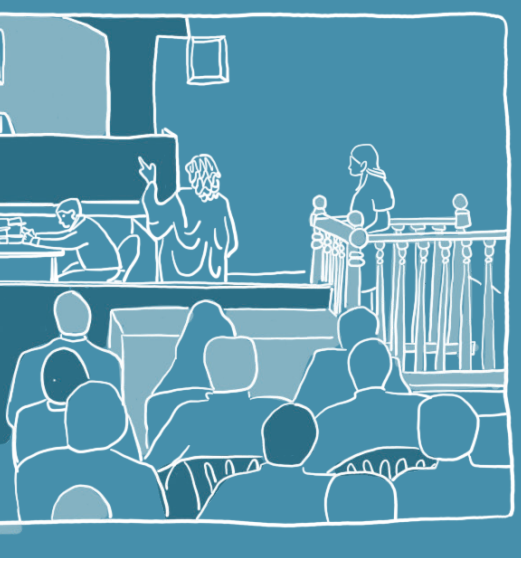

अदालत के कमरे में दाख़िल होना

अदालत के कमरे ऐसी जगहें होती हैं जहाँ जज और वकीलों के बीच मामले के बारे में संवाद होता है. आम तौर पर वादी को इस संवाद से बाहर रखा जाता है. अदालत जब तक आपसे ख़ुद कोई सवाल न करे, अदालत में आपको बोलने से बचना चाहिए. अदालत में लोगों से उम्मीद की जाती है कि वे अदालत के भीतर मर्यादा और शिष्टाचार को बनाए रखें. आपको इन बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

क) आपकी पोशाक उपयुक्त हो
ख) आप समय का ख़्याल रखें
ग) जब आपसे कुछ पूछा न गया हो तो न बोलें
घ) अदालत की इजाज़त से, और अपने वकील के संकेत करने पर बोलें
च) शांत रहें
छ) सावधानी से सुनें

भारत में न्यायिक प्रणाली की सबसे बड़ी समस्याओं में से एक न्यायिक फैसलों में 'देरी' है.

बाधाएँ/जोखिम

वित्तीय: भारत में क़ानूनी सेवाओं का खर्च चुका पाने में अक्षम लोगों के लिए क़ानूनी मदद के प्रावधान के जरिए न्यायिक प्रक्रिया में आने वाले वित्तीय खर्च संबंधी बाधा को दूर कर लिया गया है. भारतीय संविधान में क़ानूनी मदद के अधिकार को स्थापित किया गया है और क़ानूनी सेवाएँ प्राधिकार अधिनियम, 1987 में भी इसे मुहैया कराया गया है. इस अधिनियम के तहत, ज़रूरतमंद लोगों को क़ानूनी मदद मुहैया कराने के लिए राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर क़ानूनी सेवा प्राधिकारों को स्थापित किया गया है. लेकिन भारत में क़ानूनी मदद की व्यवस्था पर बहुत अधिक बोझ है जिसके नतीजे में अच्छी और कारगर क़ानूनी सेवाओं में कमी पाई जाती है.

न्यायिक प्रणाली में समय और देरी: भारतीय अदालतों में होने वाली देरी इंसाफ़ हासिल करने में एक अहम जोखिम और ख़तरा है. यह देरी कई वजहों से हो सकती है जिसमें अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा, संसाधनों की किमी, और काम के बोझ से दबी अदालती व्यवस्था और लंबी कार्यवाहियाँ शामिल हैं. इसलिए अदालत के पास जाने का अधिकार भले हो, देरी की वजह से अक्सर यह अधिकार निरर्थक महसूस होता है. अदालतें भी पक्षों को प्रोत्साहित करती हैं कि वे अपने विवादों का निबटारा करने के लिए वैकल्पिक प्रणालियों की मदद लें.

प्रक्रिया संबंधी देरी: हरेक अदालत के पास एक प्रणाली होती है जो यह सुनिश्चित करती है कि अदालत के सामने रखे गए आवेदन और याचिकाएँ जजों के सामने समुचित आकार-प्रकार में पहुँचें. इसलिए मामला दायर करते समय बहुत संभव है कि विषय-वस्तु और उसके स्वरूप पर कुछ आपत्तियाँ आपके सामने आ सकती हैं. जैसे कि सर्वोच्च न्यायालय में एक मामला दायर करते समय इसकी अनुमति नहीं है कि आप साथ में ऐसा कोई दस्तावेज़ जमा करें जो स्थानीय भाषा में ही हो और उसका एक आधिकारिक अंग्रेज़ी अनुवाद भी साथ में न दिया गया हो. इसी तरह प्रक्रिया संबंधी अनेक ज़रूरतें भी होती हैं.

शब्दावली

हलफ़नामा:
एक क़ानूनी दस्तावेज़ जिसमें कोई व्यक्ति शपथ लेकर तथ्यों को बयान करता है. हलफ़नामे में अदालत के आगे कुछ निश्चित तथ्यों की पुष्टि की जाती है. मनोज की कहानी में, एक हलफ़नामे को एक क़ानूनी दस्तावेज के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता था, जहाँ मनोज ने अदालत के सामने अपने बीमा दावे के बारे में तथ्यों को बयान किया हो.

दीवानी मामले:
दीवानी मामले करारनामों और संपत्ति को लेकर लोगों या संगठनों के बीच में क़ानूनी विवाद को कहते हैं. फ़सल बीमा पर अपने दावे को लेकर बीमा कंपनी के साथ मनोज का विवाद दीवानी मामले का एक उदाहरण है, जहाँ उसने करारनामे से जुड़े एक मामले के लिए क़ानूनी समाधान हासिल करने की कोशिश की.

न्यायालयांची पदानुक्रम:
न्यायालयांची क्रमवारी, ज्यामध्ये काहींना इतरांपेक्षा अधिक अधिकार आहेत. पदानुक्रमात पुढे असलेल्या न्यायालयांना खालच्या न्यायालयांच्या आदेशांचे पुनरावलोकन करण्याचा आणि त्यांना बाजूला ठेवण्याचा किंवा त्यांच्या निर्णयाची पुष्टी करण्याचा अधिकार आहे.

न्यायिक अधिकार क्षेत्र:
कुछ निश्चित मामलों की सुनवाई करने और फ़ैसला करने की किसी अदालत की शक्ति. मनोज ने जहाँ अपने मामले को दाख़िल किया था, उस अदालत के अधिकार क्षेत्र में बीमा दावों संबंधी मामलों का फ़ैसला करना आता था.

समय-सीमा
एक क़ानूनी मामला दाख़िल करने की समय-सीमा.

अवयस्क:
भारत में मेजॉरिटी एक्ट, 1875 के मुताबिक़, 18 साल से कम का कोई भी व्यक्ति अवयस्क माना जाता है.

नोटरी:
इन्हें पब्लिक नोटरी के नाम से भी जाना जाता है. ये ऐसे व्यक्ति होते हैं जो दस्तावेज़ों की क़ानूनी वैधता के गवाह बनने और उन पर दस्तख़त करने के लिए अधिकृत होते हैं. नोटरी वकील हो सकते हैं ये वे अधिकृत अधिकारी हो सकते हैं. सभी अदालत परिसरों में आप नोटरियों को पा सकते हैं जहाँ आप अपने दस्तावेज़ों को ले जाकर उन पर दस्तख़त और मुहर लगवा सकते हैं, यानी उन्हें 'नोटराइज्ड' करा सकते हैं.

पूर्व का उदाहरण:
अतीत का कोई अदालती फ़ैसला जो भविष्य में एक मिलते-जुलते मामले में फ़ैसले में मदद कर सकता हो. अदालत में मनोज की विजय ने एक कानूनी मिसाल क़ायम की, जिससे भविष्य में इससे मिलते-जुलते मामलों के लिए मार्गदर्शन मिल सकता है. ख़ास कर उन दूसरे किसानों को जो फ़सल बीमा दावों को लेकर समस्याओं का सामना कर रहे हैं.

नियम:
नियम ऐसी गाइडबुक्स होती हैं जो क़ानूनों को बेहतर तरीक़े से समझने और उनका पालन करने में मदद करती हैं. चूँकि इतनी अलग-अलग क़िस्म की स्थितियाँ हैं, इसलिए क़ानून निर्माता हरेक चीज़ के लिए क़ानून नहीं बना सकते हैं. इसलिए, वे इसके लिए 'नियम' बनाते हैं. ये नियम सरकारी विभागों द्वारा बनाए जाते हैं और वे इसका विवरण देते हैं कि मुख्य क़ानूनों का उचित रूप से किस तरह पालन किया जाए. एक तरह से ये अतिरिक्त सूचनाएँ देते हैं ताकि इसे सुनिश्चित किया जा सके कि हर कोई यह जान जाए कि क़ानूनों का सही-सही पालन करने के लिए क्या करना होगा.

क़ानून/विधान/विधि:
क़ानून निर्माताओं द्वारा बनाए गए लिखित क़ानून. इन्हें विधान भी कहा जाता है, ये "बेयर एक्ट्स" के नाम से जानी जाने वाली किताबों में शामिल होते हैं. क़ानूनों को अध्यायों में बाँटा जाता है, जिन्हें सेक्शनों और सब-प्रावधानों में उपविभाजित किया जाता है.

अध्याय 4

क़ानून के लंबे हाथ

पुलिस की शक्तियाँ और क़ानून लागू करने वाली एजेंसियां

सलीम एक पुरस्कार प्राप्त फ़ोटोग्राफ़र है जिसे उसके अख़बार ने बेंगलुरू के बाहरी इलाक़े में एक बस्ती में हो रहे एक विरोध प्रदर्शन को कवर करने के लिए भेजा था। यहाँ ठेका मज़दूर एक कंपनी द्वारा मनमाने तरीक़े से अपने ठेकों को रद्द किए जाने के ख़िलाफ़ जुलूस निकाल रहे थे। विरोध प्रदर्शन को कवर करने के दौरान सलीम ने देखा कि पुलिस आई और उसने आंदोलनकारियों को तितर-बितर होने के आदेश दिए।

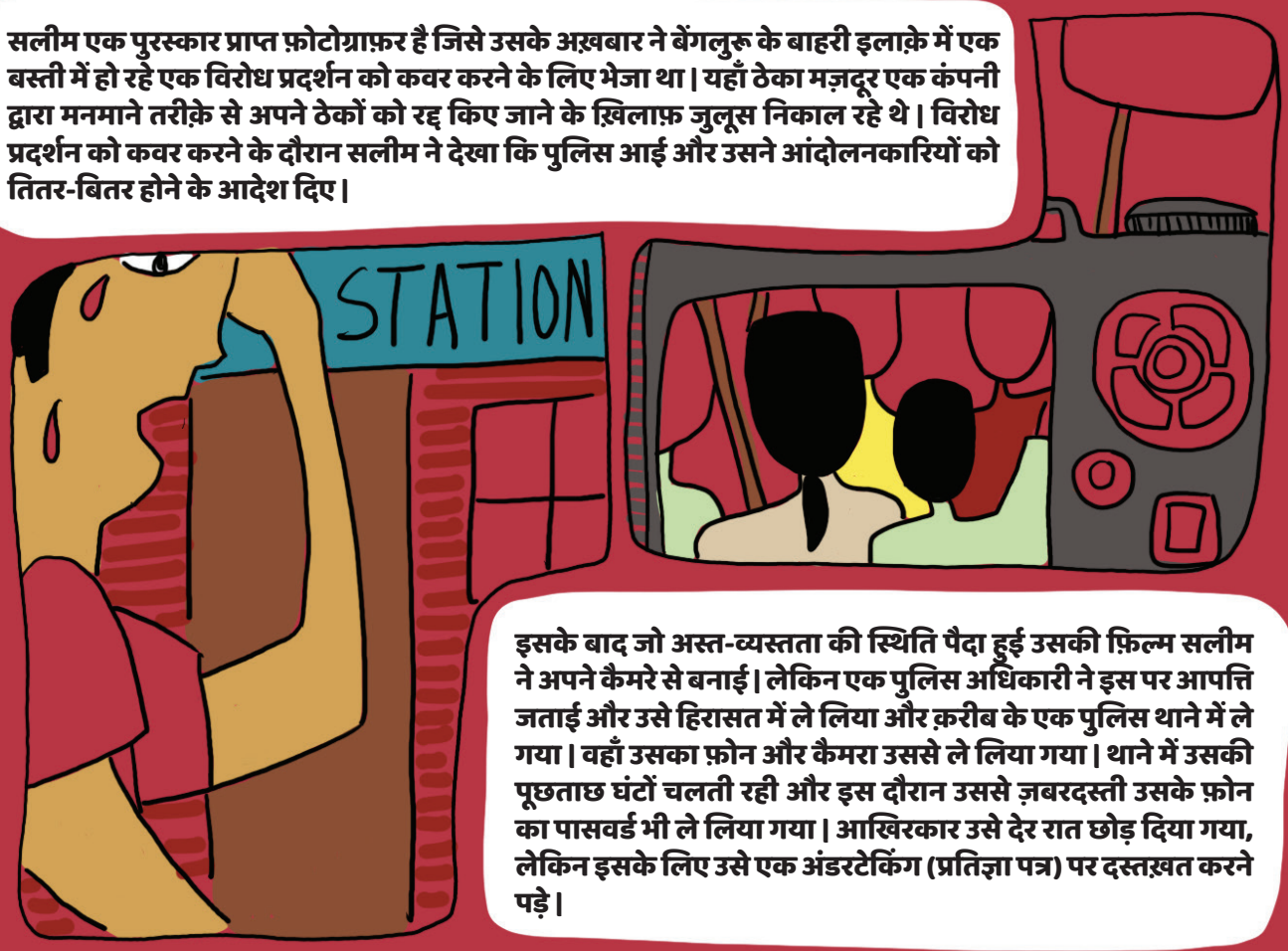

इसके बाद जो अस्त-व्यस्तता की स्थिति पैदा हुई उसकी फ़िल्म सलीम ने अपने कैमरे से बनाई। लेकिन एक पुलिस अधिकारी ने इस पर आपत्ति जताई और उसे हिरासत में ले लिया और क़रीब के एक पुलिस थाने में ले गया। वहाँ उसका फ़ोन और कैमरा उससे ले लिया गया। थाने में उसकी पूछताछ घंटों चलती रही और इस दौरान उससे ज़बरदस्ती उसके फ़ोन का पासवर्ड भी ले लिया गया। आखिरकार उसे देर रात छोड़ दिया गया, लेकिन इसके लिए उसे एक अंडरटेकिंग (प्रतिज्ञा पत्र) पर दस्तख़त करने पड़े।

ध्रुविका को अपने गुज़ारे के लिए लगातार दो नौकरियाँ करनी पड़ती थीं। उसके दिवंगत पिता ने कई क़र्ज़े ले रखे थे, जिसे ध्रुविका को चुकाने थे। इसके साथ-साथ उसको अपनी पढ़ाई की ख़ातिर लिए गए क़र्ज़े भी चुकाने थे और घर को चलाने में अपनी माँ की भी मदद करनी थी। ऐसे में जब क़र्ज़ देने वाली एक छोटी-सी कंपनी के एक एक्ज़ीक्यूटिव होने का दावा कर रहे रोहित नाम के एक आदमी का फ़ोन कॉल उसे मिला तो उसको सुखद आश्चर्य हुआ। रोहित ने उससे कहा कि उसकी कंपनी बहुत सस्ती ब्याज दरों पर एक घंटे के भीतर उसे 15 लाख रुपए क़र्ज़ पर देने को तैयार है। वह इस प्रस्ताव से आकर्षित थी, और वह अपना पैन कार्ड और अपने एक बैंक खाते के ब्योरे देने पर सहज ही राज़ी हो गई। उसके खाते में क़रीब 7 लाख रुपए थे। यह उसकी लिक्विड सेविंग थी। रोहित ने उसे बताया कि जल्दी ही उसे बैंक से एक मैसेज मिलेगा जिसमें रक़म हासिल होने की सूचना होगी और क़र्ज़े के दस्तावेज़ उसे एक लिंक के ज़रिए मिलेंगे जिनको पाने के लिए उसे उस लिंक पर क्लिक करना होगा।

उसने जैसे ही लिंक पर क्लिक किया, उसका फ़ोन हैंग कर गया, लेकिन अंत में उसके सामने एक पेज खुला जिस पर उसे कई तरह के दस्तावेज दिखाई दे रहे थे। उसे अपने बैंक से एक मैसेज भी मिला, जिसके बारे में उसे लगा कि यह उसे क़र्ज़े की रक़म मिलने के बारे में होगा। लेकिन बात ऐसी नहीं थी। मैसेज उलटे इस बारे में था कि उसके खाते से 6 |5 लाख रुपए 'हैलो किटी' के नाम भेज दिए गए थे। उसे समझ में नहीं आया कि वह क्या करे, उसने अपने बैंक को फ़ोन किया। उन्होंने कहा कि वे रक़म के इस ट्रांसफ़र को रद्द कर देंगे, लेकिन वे कोई कार्रवाई करने में नाकाम रहे। अगली सुबह जब वह बैंक की शाखा में पहुँची तो मैनेजर ने उससे पुलिस में शिकायत दर्ज कराने को कहा।

पूरे भारत में रोज़मर्रा के जीवन में लोगों के साथ जो कुछ होता है, सलीम और ध्रुविका की ये कहानियाँ उन घटनाओं से बहुत अलग नहीं हैं।

आपराधिक प्रक्रिया एक भूलभुलैया है जिससे निकल पाना तो दूर, उसे समझना ही नामुमकिन दिखाई देता है।

पुलिस, अदालतें और वकील, सभी ऐसे हाकिमों की तरह दिखाई जेते हैं जिनकी आज्ञा का पालन करने और उन पर भरोसा करने के अलावा कोई और उपाय नहीं हैं। और उन पर कभी कोई सवाल नहीं उठाया जा सकता है।

स्वाभाविक है कि हम जिस बात को नहीं जानते हैं, उस पर सवाल नहीं करना कोई समझदारी की बात नहीं है।

यहीं आकर हमारी यह चर्चा मददगार होगी। हम आपको वे सारी ज़रूरी बातें बताएँगे जो यह यक़ीनी बनाएँगी कि क़ानून के साथ आपका संबंध या संवाद कारगर हो सके।

कार्यवाही के पीछे का दर्शन

कई बार यह लग सकता है कि आपराधिक प्रक्रिया एक अंतहीन फंदा है, जिसमें अलग-अलग समय पर एक ही क़िस्म के सवाल बार-बार पूछे जाते हैं और वही जवाब दिए जाते हैं | इस अहसास में कुछ सच्चाई है, क्योंकि आख़िरकार यह प्रक्रिया इस एक सवाल का जवाब देने के मक़सद से काम करती है - क्या किसी व्यक्ति ने वह अपराध किया है या नहीं किया है जिसका आरोप लगाया जा रहा है |

जैसे-जैसे प्रक्रिया आगे बढ़ती है इस सवाल के साथ कानून का रिश्ता और बारीक होता जाता है | शुरुआती कार्रवाइयों के फ़ौरन बाद आरोप लगाने के दौरान सामग्री की गहराई से छानबीन की जाती है | इसमें यह देखा जाता है कि क्या इस सामग्री को क़ानूनी तौर पर स्वीकार किया जा सकता है | लेकिन इस अवस्था में अभी सामग्री की प्रामाणिकता पर संदेह नहीं किया जाता | मान लीजिए कि हर चीज़ सच है और अगर आपको लगता है कि आगे की कार्रवाई करने का कोई आधार नहीं है तब कार्यवाही वहीं रोक दीजिए और आरोपित को बरी कर दीजिए | अगर नहीं, तब आरोप लगाइए और सुनवाई के लिए ले जाइए जहाँ गवाह आएँगे और शपथ लेकर गवाही देंगे | हमने ऊपर जिस सवाल का ज़िक्र किया है, उसका पूरा जवाब सुनवाई के अंत में मिलता है, जब अदालत हर चीज़ को परखती है और ख़ुद से सवाल करती है कि क्या आरोप लगाने वाले पक्ष (अभियोजन) ने अपना मामला इस तरह साबित किया है कि किसी उचित या तर्कसंगत संदेह की कोई गुंजाइश नहीं बचती है | अगर हाँ, तब आरोपित को क़सूरवार ठहराया जाता है और उसे सजा सुनाई जाती है | अगर नहीं तब उसके ऊपर लगाए गए सारे आरोपों से उसे बरी करार दिया जाता है | बेशक प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ़आईआर) दर्ज करने से लेकर अंतिम फ़ैसले तक की इस यात्रा में आम तौर पर बरसों लग जाते हैं |

इस अध्याय में हम इस यात्रा पर चलेंगे ताकि इन चरणों को थोड़े बेहतर तरीक़े से समझ सकें | अंत में हम इस यात्रा को ख़त्म करके इसके एक तत्व पर करीबी नज़र डालेंगे जो आपराधिक न्याय प्रणाली का एक हिस्सा है |

क़ानून

हर सफ़र की ही तरह इस सफ़र में भी हमें नक़्शे की ज़रूरत होगी | इसके लिए हम क़ानून को एक नक़्शे की तरह लेंगे जो आपराधिक प्रक्रिया के इस सफ़र में हमारा मार्गदर्शन करेगा | हम सभी जानते हैं कि संविधान सबसे महत्वपूर्ण कानूनी दस्तावेज़ है | आपराधिक क़ानूनों की जब बात आती है तब भारतीय दंड संहिता 1860, आपराधिक विधि विधान 1973, और भारतीय प्रमाण अधिनियम 1872 की तिकड़ी संविधान को एक कड़ी टक्कर देते हैं | ये लिखित क़ानून पूरी आपराधिक प्रक्रिया का मूल तत्व बनाते हैं और आपराधिक प्रक्रिया के लिए रोज़मर्रा के नियम हैं | मौजूदा समय में सरकार ने नए क़ानूनों का मसौदा तैयार किया है जो इन तीनों क़ानूनों की जगह लेंगे और संसद में इन पर गौर किया जा रहा है | ये मसौदा क़ानून इतने अलग नहीं हैं कि इस अध्याय में प्रक्रिया की हमारी समझ में कोई रुकावट डालें |

भारतीय दंड संहिता (या आईपीसी) एक विशालकाय क़ानून है जिसमें पाँच सौ से ज़्यादा प्रावधान हैं | इसमें अनेक प्रकार के अपराधों के ब्योरे हैं, जिसमें मानव शरीर के ख़िलाफ़ अपराधों से लेकर संपत्ति के ख़िलाफ़ अपराध और न्यायिक प्रक्रिया के ख़िलाफ़ अपराधों तक शामिल हैं | आईपीसी को अपराधों का सामान्य क़ानून कहा जाता है | इसके पूरक के रूप में कई दूसरे क़ानून हैं जिनमें विशेष अपराधों के ब्योरे हैं और वे अपराधों के विशेष क़ानून कहलाते हैं |

इस महत्वपूर्ण आपराधिक कानून के साथ साथ आपराधिक विधि विधान 1973 (सीआरपीसी) और भारतीय प्रमाण अधिनियम 1872 (आईईए) हैं | सीआरपीसी इनमें से शायद सबसे महत्वपूर्ण है, जो जाँच-पड़ताल और अपराधों की सुनवाइयों के दौरान विधियों के ब्योरे देता है | एक ऐसी व्यवस्था में जहाँ सुनवाइयों को पूरा करने में ख़ासा वक़्त लेता है, ऐसे में गिरफ़्तारी और जमानत संबंधी क़ानून प्रक्रिया का वास्तविक केंद्र बिंदु बन जाते हैं | सीआरपीसी में इन्हें दर्ज किया गया है, जिनकी अदालतें करती हैं | जाँच-पड़ताल और सुनवाइयों के अलावा, सीआरपीसी में पुलिस की शक्तियों के बारे में नियम भी दिए गए हैं, जिसके तहत पुलिस दंगे या प्रदर्शनों जैसे 'उभरते हुए ख़तरों' से निबटने के लिए अस्थायी आदेश जारी कर सकती है |

क्या आप संविधान में दी गई कुछ सुरक्षा प्रावधानों (सेफगार्डों) की पहचान कर सकते हैं जो आपराधिक संदर्भों में लागू होते हों |

इन क़ानूनों के साथ-साथ, अदालतें अपने फ़ैसलों के ज़रिए भी दिशानिर्देश बनाती हैं जो क़ानूनी प्रक्रिया के लिए बाध्यकारी होते हैं, यानी क़ानूनी प्रक्रिया को उनका पालन करना ज़रूरी होता है | वे आपराधिक न्याय प्रणाली की पूरी व्यवस्था का हिस्सा बन जाते हैं |

प्रक्रिया की शुरुआत

क़दम 1 | आम तौर पर प्राथमिक सूचना रिपोर्ट (एफ़आईआर) दर्ज करने के साथ पुलिस की आपराधिक जाँच-पड़ताल शुरू होती है | इस मौक़े पर पुलिस आपकी शिकायत के आधार पर विभिन्न अपराधों की एक सूची तैयार करती है और आरोपित व्यक्तियों के नामों को दर्ज करती है (अगर कुछ व्यक्तियों को साफ़-साफ़ नामज़द बनाया गया है) | इसमें मामले के लिए जाँचकर्ता अधिकारी का नाम भी दर्ज किया जाता है | इसके बाद आपको अपना हस्ताक्षर करके सूचनाओं के सही होने की पुष्टि करनी पड़ती है |

एक पीड़ित के नाते आपको एफ़आईआर की एक प्रति बिना किसी शुल्क के हासिल करने का हक़ है | सैद्धांतिक रूप से पुलिस के पास जब भी ऐसे किसी अपराध की सूचना दी जाती है जिसकी जाँच-पड़ताल पुलिस बिना किसी पूर्व अनुमति के कर सकती है, इसके लिए पुलिस को एक एफ़आईआर दर्ज करना जरूरी होता है | व्यवहार में होता यह है कि एफ़आईआर अपने आप दर्ज नहीं होते |

क़दम 2 | अगर एक एफ़आईआर दर्ज हो जाए, तब पुलिस जाँच-पड़ताल शुरू करती है | एफ़आईआर में जिन आरोपों की बात की गई है, उनके लिए सबूत जुटाने के लिए पुलिस द्वारा उठाए गए क़दमों को तकनीकी तौर पर जाँच-पड़ताल (investigation) कहते हैं | सबूत जुटाने के लिए उठाए गए क़दमों में शामिल हैं - गिरफ़्तारियाँ, तलाशी, ज़ब्ती, गवाहों से पूछताछ | इस बात को लेकर कोई समयसीमा नहीं होती है कि जाँच-पड़ताल कितनी लंबी चल सकती है, समयसीमा सिर्फ़ तभी लागू होती है जब किसी संदिग्ध को गिरफ़्तार करके हिरासत में रखा गया हो | शुरुआती अवस्था के बाद सबूतों की गहराई से जाँच की जाती है और आरोप तय किए जाते हैं | इसमें यह भी देखा जाता है कि सामग्री क़ानूनी तौर पर स्वीकार्य है कि नहीं | लेकिन अभी भी इस पर संदेह नहीं किया जाता है कि सामग्री प्रमाणिक है या नहीं | अगर सब कुछ ठीक है, लेकिन सबूत पर्याप्त नहीं हैं तो जाँच-पड़ताल ख़त्म कर दी जाती है और आरोपित को छोड़ दिया जाता है |

फ़र्स्ट इन्फ़ॉर्मेशन रिपोर्ट या प्राथमिकी में एक यूनीक नंबर होता है, जिसको आप तारीख़ और पुलिस थाने के नाम के साथ नोट कर लें, क्योंकि मामले के बारे में भविष्य में इन सूचनाओं की ज़रूरत पड़ेगी |

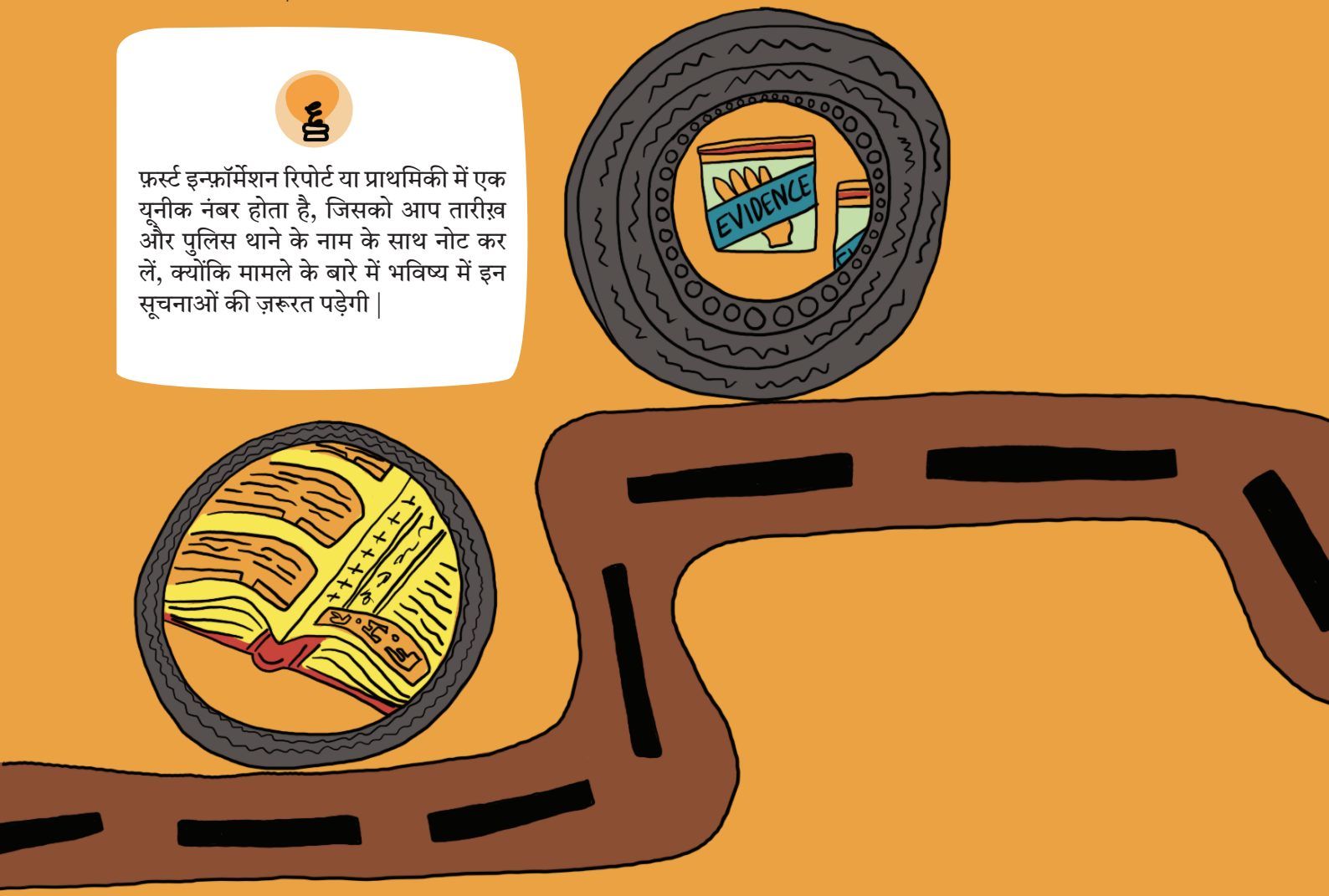

क़दम 3 | जब भी पुलिस एक जाँच-पड़ताल पूरी करती है, यह अदालत को एक रिपोर्ट सौंपती है जिसमें इसकी सिफ़ारिश होती है कि मामले को सुनवाई के लिए आगे बढ़ाया जाए या नहीं | पुलिस जब एक सकारात्मक सिफ़ारिश पेश करती है तब इस रिपोर्ट को एक “आरोपपत्र” कहा जाता है |

पुलिस सिर्फ़ एक सिफ़ारिश करती है कि मामले को आगे बढ़ाया जाए कि नहीं | मामले को आगे बढ़ाने का फ़ैसला आख़िरकार अदालत के ऊपर होता है जो पुलिस की सिफारिश से असहमत हो सकती है और आरोपित के ऊपर मुक़दमा चलाने से इन्कार भी कर सकती है |

क़दम 4 | इस सुनवाई के अंत में “सवाल” का पूरा-पूरा जवाब दिया जाता है, जहाँ अदालत से हर चीज़ को परखने की उम्मीद की जाती है | अदालत यह सवाल उठाती है कि क्या अभियोजन ने बिना किसी समुचित शक के अपना मामला साबित कर दिया है | अगर हाँ तब आरोपित को क़सूरवार ठहराया जाता है | अगर नहीं, तब उसे सारे आरोपों से बरी कर दिया जाता है |

ध्यान दें कि कुछ देशों के उलट भारत में क़सूरवार ठहराए जाने और बरी किए जाने दोनों क़िस्म के फैसलों के ख़िलाफ़ अपील की जा सकती है |

आपको याद है कि ऊपर हमने एक "सवाल" की बात कही थी? यह उन चरणों में से पहला चरण है जब प्रक्रिया में यह सवाल किया जाता है | यहीं आकर अगर दिखाए गए सबूत सरसरी तौर पर यह बताते हैं कि जो काम किया गया था वह असल में एक अपराध था, तब प्रक्रिया मुक़दमे या सुनवाई की ओर जाती है जहाँ गवाह आएँगे और शपथ लेकर गवाही देंगे |

इस सफ़र में अब इसके बाद आपको दो विकल्पों में से एक को चुनना ज़रूरी हो जाता है और हर स्थिति से जुड़ी आपराधिक प्रक्रिया के क़दमों को देखना होगा | ये दोनों विकल्प हैं:

क) अगर आरोप आपके ख़िलाफ़ लगाए गए हैं
ख) अगर आप आरोप लगाना चाहते हैं

क. अगर आरोप आपके ख़िलाफ़ लगाए गए हैं

भारतीय आपराधिक प्रक्रिया किसी आरोप के अभियुक्त को अधिकार देती है, लेकिन यह जानना बुद्धिमानी होगी कि सारी बातें पुलिस के हाथ में होती है और आपको सतर्क रहना चाहिए और मूल समस्या पर ध्यान देना चाहिए | आइए सुनवाई से पहले के चरणों को देखें और इसके बाद सुनवाई के चरणों की बात करेंगे |

भारत में एक पुलिस छानबीन किसी व्यक्ति की निजी स्वतंत्रता को लेकर भारी ख़तरे पैदा कर सकती है, क्योंकि पुलिस के पास बिना न्यायिक वारंट के गिरफ़्तार करने की व्यापक शक्तियाँ हैं | कई अपराधों को "गैर-ज़मानती" बताया गया है, यानी उनमें गिरफ़्तार होने पर ज़मानत पाने का अधिकार नहीं है, बल्कि इसका फ़ैसला अदालतों के विशेषाधिकार के ऊपर निर्भर करता है | अपनी स्वतंत्रता के प्रति खतरों को बेहतर तरीक़े से समझने के लिए आपके लिए अपने ख़िलाफ़ दायर एफ़आईआर को हासिल करना और उसका अध्ययन करना ज़रूरी है |

याद रखें कि अनेक राज्यों में पुलिस अब एफ़आईआर की प्रतियों को ऑनलाइन उपलब्ध कराती है | इसके अलावा मामला जिस स्थानीय अदालत के अधीन आता है उससे इसकी एक प्रति हासिल करने के लिए क़दम उठाए जा सकते हैं |

पता लगाएँ कि आपका स्थानीय थाना एफ़आईआर को ऑनलाइन उपलब्ध कराता है कि नहीं | आपको एफ़आईआर में कौन से तत्व साझे दिखाई देते हैं |

गिरफ़्तारी से बचने के लिए सीआरपीसी में "अग्रिम जमानत" का एक उपाय मुहैया कराया गया है | व्यवहार में इसका नतीजा यह होता है कि पुलिस आपको हिरासत में नहीं ले सकेगी | लेकिन याद रखें कि आप इस उपाय का सीधे-सीधे लाभ नहीं उठा सकते हैं | अदालत हरेक मामले पर उसके तथ्यों के आधार पर फ़ैसला करेगी | आपके लिए एक वकील से बात करके यह तय करना ज़रूरी है कि अब कौन-सा क़दम उठाया जाए |

अगर पुलिस आपको गिरफ़्तार करती है तब उसके पास आपको 24 घंटों तक हिरासत में रखने का अधिकार है | लेकिन उससे अधिक समय तक हिरासत में रखने के लिए उसको अदालत की इजाज़त चाहिए |

जब आप किसी "ज़मानत योग्य" अपराध के लिए गिरफ़्तार होते हैं, तब अगर आप ऐसी औपचारिक शर्तों को मानने को तैयार हों जो अदालत या पुलिस आपके सामने रखे तो आप रिहा किए जाने के हक़दार हैं | लेकिन अगर आप पर "ग़ैरज़मानती" अपराध का मुक़दमा लगाया गया है तब ज़मानत इस पर निर्भर करेगी कि जज इसे मामले के लिए उपयुक्त मानते हैं या नहीं |

इन फ़ैसलों को लेने के लिए कोई वैधानिक नियम या दिशानिर्देश नहीं हैं जिनका अदालतें पालन करती हैं, सिवाय इस आम परंपरा के कि अधिकतम सात साल की क़ैद की सज़ा वाले मामलों में आम तौर पर गिरफ़्तारी नहीं की जानी चाहिए | लेकिन इसके आगे हर मामले पर उसकी अपनी स्थितियों के मुताबिक़ फ़ैसला किया जाता है और आपका क़ानूनी पक्ष किस तरह रखा जाता है, यह आपकी ज़मानत याचिका के नतीजे को बहुत अधिक निर्धारित करता है |

आईपीसी की एक प्रति हासिल करें और कुछ ज़मानती और ग़ैरज़मानती अपराधों की पहचान करें |

ज़मानत याचिकाएँ ख़ारिज होने से यह मामला हमेशा के लिए ख़त्म नहीं हो जाता है | कुछ समय बाद आप इसी अदालत में फिर से ज़मानत की याचिका दाखिल कर सकते हैं और यह दिखा सकते हैं कि पिछली बार की तुलना में हालात बदल गए हैं | या फिर आप ज़मानत की शुरुआती याचिका ख़ारिज होने के ख़िलाफ़ किसी ऊँची अदालत (सर्वोच्च अदालत समेत) में जा सकते हैं और इस ऊँची अदालत को यह यक़ीन दिलाने की कोशिश कर सकते हैं कि पुराने आदेश ग़लत थे |

गिरफ़्तारी और हिरासत आम तौर पर आरोपित व्यक्ति से पूछताछ करने के लिए किए जाते हैं | इससे हम इस मुद्दे पर पहुँचते हैं कि एक जाँच-पड़ताल के दौरान पुलिस की पूछताछ की प्रक्रिया में किसी व्यक्ति के पास कौन-से अधिकार होते हैं |

संविधान अपने ख़िलाफ़ गवाही देने को मजबूर किए जाने के ख़िलाफ़ अधिकार की गारंटी करता है | इससे जवाब हासिल करने के लिए ताक़त का इस्तेमाल करने से ही बचाव मिलता है | यहाँ यह ज़िम्मेदारी आरोपित पर आती है कि वह आगे चल कर यह साबित करे कि उसे बोलने के लिए मजबूर किया गया था |

जब आप हिरासत में न हों, ऐसी हालत में पूछताछ के दौरान क़ानूनी सलाह का अधिकार लगभग नहीं है | हिरासत में पूछताछ का सामना कर रहे व्यक्तियों के लिए भी यह बस नाम भर के लिए ही है | इन चिंताओं को दूर करने वाली एक ही बात है वो यह कि चाहे कोई व्यक्ति हिरासत में हो या नहीं, उसके द्वारा पुलिस को दिया गया कोई भी बयान सच्चाई के सबूत के रूप में स्वीकार्य नहीं है, चाहे यह जुर्म का क़बूलनामा ही क्यों न हो |

सुनवाई के संदर्भ में, अधिकारों के लिहाज़ से एक आरोपित व्यक्ति के पास सबसे महत्वपूर्ण अधिकार इन्हें माना जा सकता है:

- अदालत में गवाह के रूप में पेश होने या न होने का फ़ैसला करने का अधिकार
- अदालत द्वारा पूछे गए सवालों के जवाब देने का कर्तव्य
- सभी गवाहों से सवाल करने का अधिकार

इनमें से कोई भी या सभी अधिकारों पर अमल करने के लिए, और अदालत के सवालों के जवाब देने के कर्तव्य का पालन करने के लिए, क़ानूनी मदद की ज़रूरत होती है ताकि अपने द्वारा किए जाने वाले फ़ैसलों के नतीजों को आप पूरी तरह से समझ सकें |

मुफ़्त क़ानूनी मदद के योग्य कौन लोग हैं, यह जानने के लिए क़ानूनी सेवाएँ प्राधिकार अधिनियम, 1987 का अध्याय चार पढ़ें |

जहाँ तक क़ानूनी सहायता की बात है, संविधान इसका अधिकार देता है कि कोई भी व्यक्ति अपनी पसंद के वकील की मदद ले सकता है और जहाँ कोई व्यक्ति वकालत का ख़र्च नहीं उठा सकता वह क़ानूनी सेवाएँ प्राधिकार अधिनियम, 1987 के तहत मुफ़्त क़ानूनी सहायता हासिल कर सकता है, जिसका ख़र्च सरकार उठाती है | अलग-अलग राज्यों में मुफ़्त क़ानूनी सहायता हासिल करने की प्रक्रिया अलग-अलग है | जिस अदालत में किसी आरोपित व्यक्ति को पेश किया जा रहा है, उस अदालत का फ़र्ज़ है कि वह उसे मुफ़्त क़ानूनी मदद के अधिकार के बारे में सूचित करे |

ख. अगर आप आरोप लगाना चाहते हैं

मान लीजिए आप धृविका हैं और आपके साथ जो ग़लत किया गया था उसका इंसाफ़ पाने के लिए आपको आपराधिक न्याय प्रक्रिया की मदद लेनी है | शुरुआत में ही आपको कुछ फ़ैसले करने पड़ेंगे | अगर आपको लगता है कि आपके मामले को साबित करने के लिए आपके पास सारे सबूत हैं, आपको अपने जान पर आरोपित व्यक्ति से कोई फ़ौरी ख़तरा नहीं है, तब आपको एफ़आईआर लिखाने या ऐसे किसी दस्तावेज़ की ज़रूरत नहीं है (जैसे आज कई बीमा कंपनियाँ कार चोरी के मामले में बीमा के मामले पर कार्रवाई करने के लिए पुलिस केस ज़रूरी मानती हैं), तब आप पुलिस के पास न जाकर सीधे अदालत में ही शिकायत दर्ज करा सकते हैं | अदालत शिकायत की पड़ताल करती है और अगर उसको लगता है कि सुनवाई करने के लिए पर्याप्त आधार है, तब यह आरोपित को बुलावा (समन) भेज सकती है | इसके बाद उस सवाल का जवाब तलाशने की कार्रवाई शुरू होती है, जिसका ज़िक्र हमने ऊपर किया था |

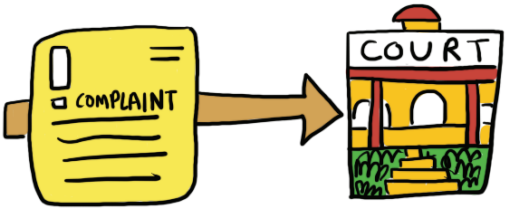

अगर आप सीधे अदालत नहीं जा सकते, तब आपके सामने पुलिस के पास जाकर शिकायत दर्ज कराने का उपाय ही है | शिकायत दर्ज कराना आम तौर पर पहला क़दम होता है, जिसके बाद आपको पुलिस थाने जाकर संबद्ध अधिकारी के सामने तथ्यों को समझाना पड़ता है | आप उम्मीद कर सकते हैं कि अधिकारी एफ़आईआर दर्ज कर लेंगे | अगर वे ऐसा नहीं करते हैं तब आपको जिला स्तर के ऊँचे अधिकारी को लिखना चाहिए | अगर इससे भी कोई नतीजा नहीं निकलता है, तब आप अंतिम उपाय के रूप में संबद्ध अदालत में एक आवेदन देकर माँग कर सकती हैं कि पुलिस को एफ़आईआर दर्ज करने के आदेश दिए जाएँ |

एक बार एफ़आईआर दर्ज हो जाने के बाद, पुलिस जाँच-पड़ताल अपने हाथ में ले लेती है और एक पीड़ित के रूप में आपकी भूमिका होती है

- मामले को अदालत ले जाने के लिए उन्हें आप जो भी मदद दे सकें, दें
- उपलब्ध सबूतों को उन्हें सौंपें
- पुलिस और अगर ज़रूरी हो तो अदालत को अपना बयान दें (अदालत को दिया गया बयान अधिक भरोसेमंद माना जाता है)

आपके पास

- आरोपित अगर ज़मानत की याचिका दाखिल करता है तो उसका विरोध करने का अधिकार है
- मुआवज़ा माँगने का अधिकार है

सीआरपीसी में मुक़दमे के अंत में मुआवज़े का प्रावधान है, लेकिन कई राज्यों में सुनवाई ख़त्म होने से पहले ही अंतरिम मुआवज़े के नियम हैं |

मुआवज़े को लेकर अपने राज्य के प्रासंगिक नियमों को देखें |

अगर जाँच के बाद पुलिस इस नतीजे पर पहुँचती है कि कोई मामला नहीं बनता है, तब क़ानून यह माँग करता है कि मामले को पूरी तरह से बंद करने से पहले पीड़ित की बात सुनी जाए | अदालत के लिए ज़रूरी है कि वह आपको इसका उचित मौक़ा दे कि आप यह दिखा सकें कि मामले की सुनवाई क्यों ज़रूरी है | सुनवाई के दौरान अगर मामला अदालत में आपकी शिकायत के आधार पर बना था, तब अधिकतर मामलों में अभियोजन का नियंत्रण आपके हाथों में होता है | अगर सुनवाई पुलिस की जाँच के आधार पर शुरू होती है, तब अभियोजक ही मुख्य वकील होते हैं और पीड़ित सुनवाई में अभियोजक की मदद कर सकती हैं |

आपराधिक न्याय व्यवस्था से जुड़ी जगहें

आपराधिक न्याय व्यवस्था से गुज़रते हुए सिर्फ़ अपने अधिकारों और क़ानून के बारे में जान लेना ही काफ़ी नहीं है | उन सचमुच की जगहों को जानना भी उतना ही ज़रूरी है जहाँ हमें आने-जाने की ज़रूरत पड़ती है | इसमें शामिल हैं अदालतें और अदालत परिसर, पुलिस थाना, वकील का दफ़्तर और जेल | कुछ और जगहें भी इसका हिस्सा हो सकती हैं |

इस सेक्शन में हम पुलिस थाने की बात करेंगे | भारत में पुलिस और क़ानून लागू करने वाली संस्थाओं का मामला आम तौर पर राज्य सरकारों के हाथों में होता है, इसलिए इसकी कोई एक तस्वीर नहीं हो सकती है कि पुलिस थाने कैसे होते या दिखते हैं | वहाँ के लोग कैसे होते हैं, और वे कैसे काम करते हैं | इसके बावजूद कुछ बातें सबमें समान होती हैं, जिनकी हम पहचान कर सकते हैं |

प्रशासनिक मक़सद से हरेक राज्य को ज़िलों में बाँटा गया है, और हरेक ज़िले के भीतर पुलिस थाने होते हैं जो अधिकारियों की सुविधा के हिसाब से काल्पनिक क्षेत्रीय सीमाओं में बँटे होते हैं |

यह जानना एक महत्वपूर्ण काम है कि कौन-सा इलाक़ा किस पुलिस थाने के तहत आता है क्योंकि अगर आपको ज़रूरत पड़ी तो शिकायत लिखवाने के लिए वहीं जाना होगा |

यह जानने के लिए आप 100 या 112 पर फ़ोन कर सकते हैं कि आप किस पुलिस थाने की सीमा में रहते हैं |

हरेक पुलिस थाने का नेतृत्व एक अधिकारी करते हैं जिन्हें क़ानून में स्टेशन हाउस ऑफ़िसर या थाना प्रभारी कहते हैं | संक्षेप में उन्हें एसएचओ भी कहते हैं | आम तौर पर वे इन्स्पेक्टर स्तर के अधिकारी होते हैं (जिनके कंधों पर तीन सितारे लगे होते हैं) | एसएचओ की मदद के लिए सब-इन्स्पेक्टर या एसआई (कंधे पर दो सितारों वाले), सहायक सब-इन्स्पेक्टर या एएसआई (कंधों पर एक सितारे वाले), मुख्य कॉन्स्टेबल (ऊपरी आस्तीन पर शेवरॉन जैसे दो निशान) और कॉन्स्टेबल होते हैं | आम तौर पर जाँच-पड़ताल का नेतृत्व एएसआई या उनसे ऊपर के अधिकारी करते हैं |

समानताओं की बात करें तो हरेक थाने में आम तौर पर एक हवालात होता है, जहाँ किसी मामले से संबद्ध व्यक्ति को हिरासत में लेने के बाद 24 घंटों तक रखा जा सकता है - और अगर सक्षम अदालत ने इजाज़त दे दी तो उसके बाद भी | हरेक पुलिस थाने में कम से कम एक महिला पुलिस अधिकारी का होना भी ज़रूरी है |

अगर आपके साथ कोई अपराध हुआ है और आपको रिपोर्ट लिखानी है, तब संभावना यही है कि आपको ड्यूटी ऑफ़िसर (सेवारत अधिकारी) की मेज़ पर भेज दिया जाएगा | यह वो पुलिसकर्मी होता है जो जनरल डायरी या रोज़नामचा भरने के लिए ज़िम्मेदार होता है | यह पुलिस थाने के प्रवेश द्वार के पास स्थित होता है | यह डायरी थाने में होने वाली घटनाओं का आधिकारिक रेकॉर्ड होती है | इसमें थाने में आनेवाले हरेक पीड़ित, हरेक अधिकारी की गतिविधि, हरेक मामले के रजिस्ट्रेशन को दर्ज किया जाता है | ड्यूटी अधिकारी आम तौर से आपको अपनी शिकायत लिख कर जमा कराने को कह सकता है | या फिर वह आपसे कह सकता है कि आप उसे अपनी शिकायत बताएँ जिसके आधार पर वह इसे लिख लेगा |

इस प्रक्रिया का नतीजा यह होता है कि आपकी शिकायत को रजिस्टर में एक सीरियल नंबर मिल जाता है | यह आपकी शिकायत का पहला आधिकारिक रेकॉर्ड होता है | आम तौर पर इसको डायरी नंबर के नाम से जाना जाता है | यह आपकी शिकायत से जुड़े आगे के सभी संवादों में एक संदर्भ का काम करता है | ध्यान दें कि डायरी नंबर मिलने का मतलब यह नहीं है कि एफ़आईआर दर्ज हो गई है | अभी कई क़दम बाक़ी हैं - हम इन्हें बताने जा रहे हैं |

आपने जिस अपराध का आरोप लगाया है, उसकी गंभीरता के आधार पर आपकी शिकायत को संभव है कि पुष्टि के लिए थाने के किसी अधिक वरिष्ठ अधिकारी के पास भेज दिया जाए | पुष्टि की इस प्रक्रिया को आरंभिक जाँच भी कहा जाता है, और कई बार इसको पूरा करने में हफ़्तों लग जाते हैं | अगर पुलिस अधिकारी आपकी शिकायत को इसके योग्य मानते हैं, तब पुष्टि के अंत में एफ़आईआर दर्ज कर ली जाती है |

?

इस सेक्शन के आधार पर उन व्यक्तियों, कार्यवाहियों और दस्तावेज़ों की एक सूची बनाएँ जिनसे आपकी मुलाक़ात होने की संभावना है | अपने स्थानीय पुलिस थाने में जाएँ और देखें कि आप उनमें से कितनों की पहचान कर सकते हैं |

पुनश्च

जिस समय इस दस्तावेज को तैयार किया जा रहा था, उस समय भारतीय आपराधिक क़ानूनों की तिकड़ी की जगह नए क़ानून लाए गए: भारतीय न्याय संहिता 2023 (बीएनएस) [जिसने भारतीय दंड विधान 1860 की जगह ली], भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता 2023 (बीएनएसएस) [जिसने आपराधिक विधि विधान 1973 की जगह ली] और भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 (बीएसए) [जिसने भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की जगह ली] | इन क़ानूनों को संसद में पारित किया जा चुका है, लेकिन वे अभी लागू नहीं हुए हैं | सरकार इन्हें एक ही साथ लागू कर सकती है या जैसा कि अधिक संभावना है, उन्हें अंशों में नोटिफ़ाई करके धीरे-धीरे लागू कर सकती है |

इन नए क़ानूनों के आने से कुछ महत्वपूर्ण सवाल उठ खड़े हुए हैं | हमारे लिए सबसे बड़ा सवाल यह है कि हमने जो दस्तावेज पढ़े क्या वे बेकार हो गए? अच्छी बात यह है कि हम साफ़-साफ़ कह सकते हैं कि ऐसा नहीं है | नए क़ानूनों ने आपराधिक न्याय प्रक्रियाओं के ढाँचे और कामकाज को बहुत नहीं बदला है | और जब तक वे लागू किए जाएँगे तब तक हमारा जीवन मौजूदा क़ानूनों यानी आईपीसी, सीआरपीसी, और आईईए के मुताबिक़ ही चलेगा जिन्हें हमने पढ़ा है | नए क़ानूनों के लागू हो जाने के बाद भी, पुराने क़ानूनों के रहते हुए जो प्रक्रियाएँ शुरू हुई थीं वे भी पुराने क़ानूनों के मुताबिक़ ही पूरी की जाएँगी |

नए क़ानून आपराधिक न्याय प्रक्रिया में जिस तरह के बदलाव लेकर आए हैं, उनसे भी हम उसी तरह पेश आएँगे जैसे कि इस दस्तावेज़ में हमने सीखा है | पहले हम यह देखेंगे कि अगर हम इस प्रक्रिया के फंदे में पड़ गए हैं तो क्या होगा | और फिर उसके बाद अगर हमें अपनी शिकायत का निबटारा करने के लिए मामला दर्ज कराना पड़े तो क्या करना होगा |

बीएनएसस में जाँच-पड़ताल के कुछ हिस्सों पर समय-सीमा लागू की गई है, उम्मीद यह की गई है कि इससे प्रक्रिया की गति तेज़ होगी | इस संरचना के बारे में कोई बदलाव नहीं किए गए हैं कि जाँच-पड़ताल और सुनवाई किस तरह चलाई जाएगी | इसी तरह, गिरफ़्तारी के बारे में पुलिस की शक्तियों में कोई बदलाव नहीं किए गए हैं | लेकिन ऐसा लगता है कि किसी लंबित जाँच-पड़ताल के दौरान व्यक्तियों को हिरासत में रखने के जजों के अधिकार का विस्तार किया गया है |

पीड़ितों के लिए बीएनएसएस में इस बात को आसान बनाया गया है कि वे मामलों को कहाँ दर्ज करा सकते हैं | इसमें 100/112 पर कॉल करके शहर का कौन-सा हिस्सा किस थाने के तहत आता है यह पता लगाने की ज़रूरत घटा दी गई है, ताकि यह फ़ैसला किया जा सके कि मामले को कहाँ दर्ज कराया जाए | प्रक्रिया को तेज़ करने के लिए लगाई गई समय सीमा पीड़ित की भी मदद करेगी | लेकिन इसी के साथ, इंसाफ़ चाहने वाले पीड़ितों के लिए कुछ नई बाधाएँ भी हैं | अगर आप पुलिस के पास न जाकर सीधे अदालत में शिकायत दर्ज कराते हैं, तब बीएनएसएस ने यह ज़रूरी बना दिया है कि अदालत आपकी शिकायत पर कोई भी कार्रवाई करने से पहले आरोपित को भी सुने |

अगर आप पुराने और नए क़ानूनों के अंतरों और समानताओं के बारे में और जानने में रुचि रखते हैं तो मॉडर्न क्रिमिनल लॉ रिव्यू वेबसाइट पर india लेबल से दी गई सामग्री को देखें | यहाँ एक ही पेज पर विभिन्न क़िस्म की सामग्री जमा की गई है |
https://crimlrev.net/mclr-resources-2/

शब्दावली

अग्रिम ज़मानत:
जब किसी व्यक्ति को पता लगता है कि उसके ख़िलाफ़ एक गिरफ़्तार किए जा सकने वाले (संज्ञानात्मक) और ग़ैर ज़मानती अपराध करने के आरोप लगाए गए हैं, तब वह इसके लिए आवेदन कर सकता है | इसके नतीजे में पुलिस को यह निर्देश दिया जाता है कि अगर वे उस व्यक्ति को गिरफ़्तार करने वाले हों तो उसे अनिवार्य तौर पर ज़मानत दी जाए |

संज्ञानात्मक अपराध :
ये ऐसे अपराधों को कहा जाता है जिनमें पुलिस के पास बिना वारंट के गिरफ़्तार करने का अधिकार होता है | निशा पर जिस क़िस्म के अपराध का आरोप लगाया गया था, ऐसे गंभीर अपराधों में पुलिस को बिना किसी वारंट के गिरफ़्तार करने का अधिकार है |

न्यायिक वारंट
ये ऐसे दस्तावेज होते हैं जो पुलिस को किसी व्यक्ति या वस्तु की गिरफ़्तारी, तलाश और ज़ब्ती के अधिकार देते हैं | सबूतों की पड़ताल और संभावित कारण पाने के बाद कोई मजिस्ट्रेट या जज इनको जारी कर सकता है | भारत में न्यायिक वारंट कई क़िस्म के हो सकते हैं जैसे कि गिरफ़्तारी वारंट, तलाशी वारंट, प्रस्तुति वारंट, या रिमांड वारंट |

मुक़दमा और अभियोजन
किसी अपराध को करने के आरोपित व्यक्ति के ख़िलाफ़ की गई क़ानूनी कार्यवाही और कार्रवाइयाँ | अंग्रेज़ी के prosecution शब्द का उपयोग दोनों अर्थों में होता है | यह सुनवाई की प्रक्रिया को बताने के लिए उपयोग में तो लाया ही जाता है, जज के सामने आरोपित व्यक्ति को अपराध का क़सूरवार बताते हुए मामला पेश करने वाले क़ानूनी पक्ष को भी यही कहा जाता है | हिंदी में इनके लिए दो अलग-अलग शब्द क्रमशः मुक़दमा और अभियोजन प्रचलन में हैं |

अध्याय 5

अपने प्रतिनिधियों का चुनाव और उनके साथ कार्य करना

एक सक्रिय और संलिप्त नागरिक बनें

कल्पना कीजिए कि आपको एक घर बनाने की ज़रूरत है। ज़ाहिर है कि आप ख़ुद घर नहीं बना सकते हैं। आप अपने दोस्तों को बुलाते हैं और उन्हें इस बात के लिए राज़ी करते हैं कि अगर वे आपकी मदद करें तो उनमें से हरेक आपके घर में रह सकते हैं।

अब सोचिए कि आप और आपके कुल पचास दोस्त मिल कर घर बनाने की कोशिश कर रहे हों और हरेक के पास घर बनाने के लिए अपना ही विचार हो। कुछ का सोचना हो कि घर कम से कम दो मंज़िला होना चाहिए, और कुछ का सोचना है कि इसको एक मंज़िला ही होना चाहिए। हर कोई चिल्ला रहा है, अपनी बात को समझाने की कोशिश कर रहा है। ज़ाहिर है कि कोई भी दूसरों की बात नहीं सुन रहा है।

तो आख़िरकार हरेक समूह में से एक व्यक्ति को उनकी तरफ़ से बोलने के लिए चुना जाता है। ये दोनों वक्ता, जिन्हें हम प्रतिनिधि कह सकते हैं, अपने अपने समूह की तरफ़ से आपस में बातें करते हैं और आख़िरकार इस बात पर राज़ी होते हैं कि दो मंज़िला मकान हरेक के लिए बेहतर रहेगा। इसके बाद दो मंज़िला मकान चाहने वाले समूह के लोग हरेक व्यक्ति को अलग-अलग समूहों में संगठित करते हैं जिनके ऊपर घर का अलग-अलग हिस्सा बनाने की ज़िम्मेदारी होगी।

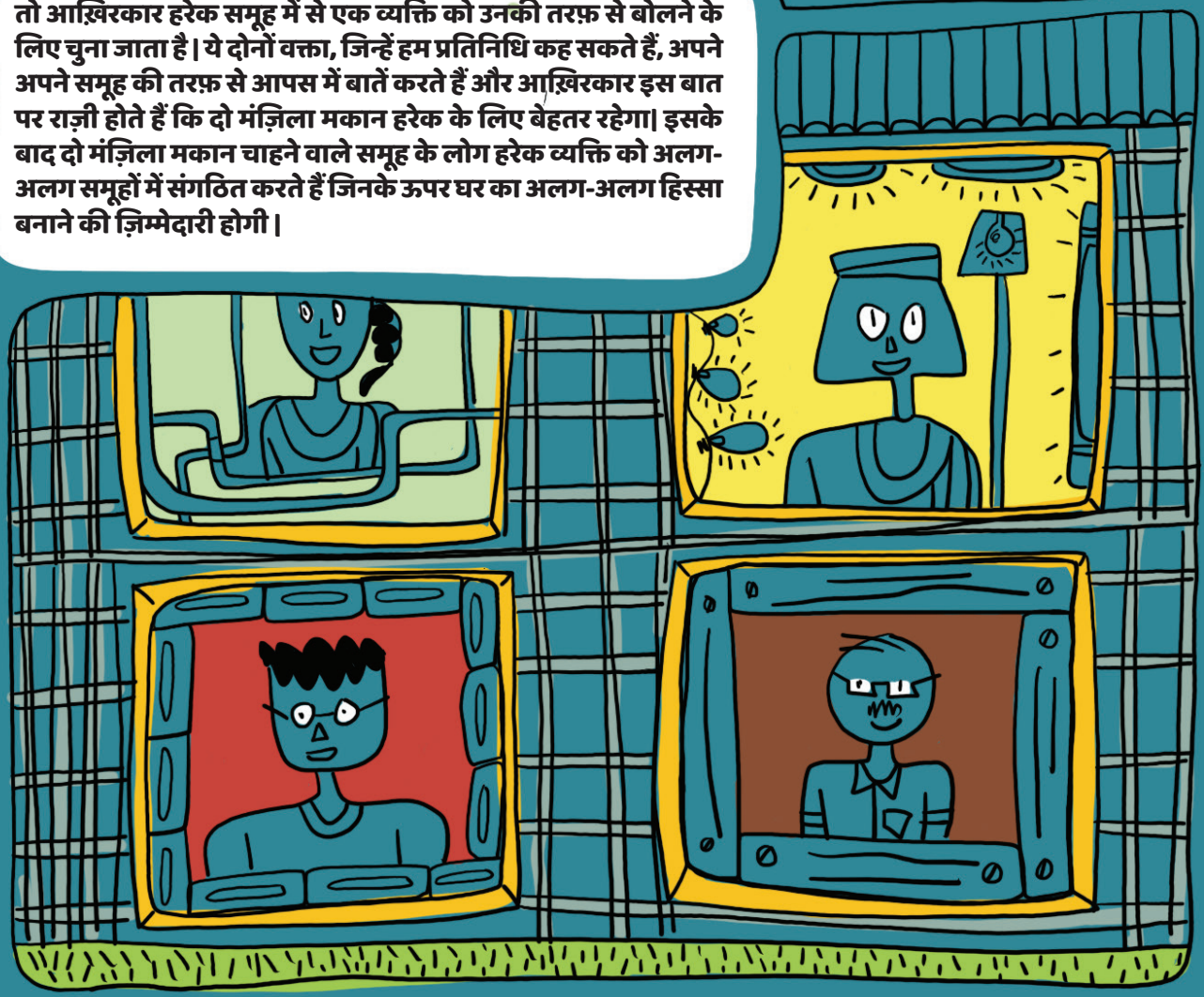

इस स्थिति में घर बनाने के इच्छुक लोग एक देश के नागरिक हैं और दोनों प्रतिनिधि देश का संसद हैं। देश में बहुत सारे लोग होते हैं, इसलिए हरेक व्यक्ति की आवाज़ नहीं सुनी जा सकती है। हरेक व्यक्ति की राय सुनी जाए इसके लिए हम चुनते हैं। हम एक प्रतिनिधि चुनने के लिए वोट डालते हैं। यह एक ऐसा राजनेता होता है जो संसद में हमारे लिए बोलता है।

हमारे संविधान के मुताबिक, जो भी व्यक्ति 18 साल से अधिक उम्र का है वह वोट डाल सकता है, ड्राइविंग लाइसेंस हासिल कर सकता है और गाड़ी चला सकता है, अपनी मर्ज़ी से किसी अनुबंध में शामिल हो सकता है। दूसरे शब्दों में, क़ानून यह स्वीकार करता है कि 18 साल का एक व्यक्ति स्वतंत्र फ़ैसले लेने के लिए भरोसेमंद माना जा सकता है और अपने फैसलों के लिए ज़िम्मेदारी उठा सकता है। और जहाँ फ़ैसले लेने की आज़ादी है, वहाँ उस आज़ादी पर अमल करने की ज़िम्मेदारी भी है। असली बदलाव लाने के लिए, आपको जागरुक बनने, सक्रिय बनने और अपने दोस्तों को जागरुक और सक्रिय बनने में मदद करने की ज़रूरत भी है।

अपनी आज़ादी का जिन क्षेत्रों में उपयोग करने की हम पर ज़िम्मेदारी है, उनमें से एक क्षेत्र है राजनीति का क्षेत्र। आपको लग सकता है कि राजनीति तो राजनेताओं का काम है और आप इसमें कोई बदलाव नहीं ला सकते। लेकिन यह सच नहीं है। ऐसा सोचना ग़लत होगा। आप बदलाव लाने की ताक़त ऐसे लोगों के हाथों में छोड़ रहे हैं जो हो सकता है कि आपकी समस्याओं के बारे में न समझते हों या शायद वे उन्हें जानते ही न हों। समाज में और आपकी अपनी जगह में बदलाव लाने में सक्षम बनने के लिए आपको राजनीति के क्षेत्र में आने की ज़रूरत है। उस स्तर पर बदलाव लाने के लिए यह सबसे शक्तिशाली चीज़ है। राजनीतिक प्रक्रिया के विभिन्न हिस्से हैं और विभिन्न बिंदु हैं और आप इनमें किसी में भी हिस्सेदारी कर सकते हैं।

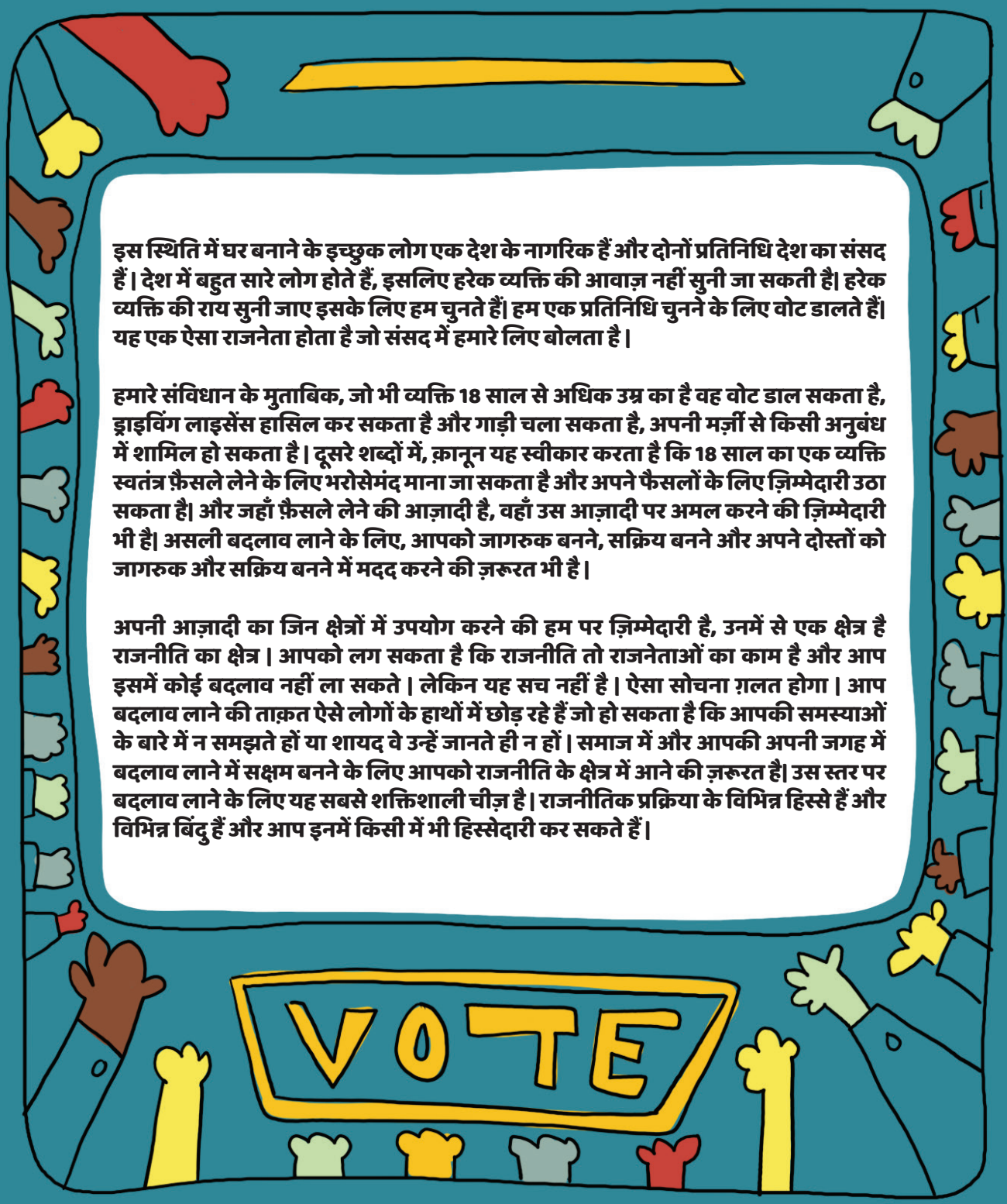

तो राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने के कौन से तरीके हैं? हमने 5 तरीके पहचाने हैं जिनसे आप बदलाव ला सकते हैं।

अपना वोट डाल कर
सूचना का अधिकार (आरटीआई) आवेदन भर कर
नीति बनाने वालों से बातें करके
किसी मक़सद के पक्ष में प्रचार करके
ख़ुद नीति निर्माता या राजनेता बन कर

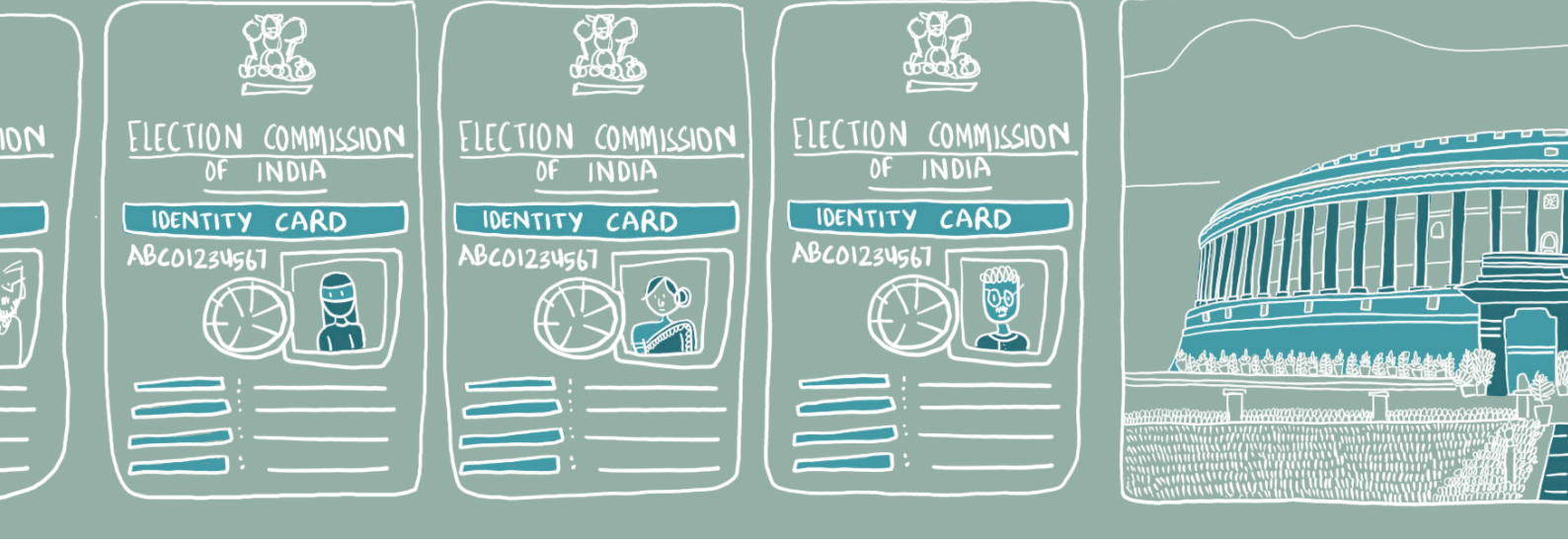

वोट कौन डाल सकते हैं?

संसद को शक्ति आपसे और भारत के सभी नागरिकों से मिलती है - यह आपके वोट से आती है | इससे फ़र्क़ नहीं पड़ता कि आप किस जेंडर, जाति, धर्म या किसी दूसरी पहचान वाले व्यक्ति हैं | क्या आपकी उम्र 18 साल से ऊपर है और आप भारत के नागरिक हैं? वोट डालना आपका अधिकार और कर्तव्य है |

आप नहीं जानते हैं कि मतदाता सूची में पंजीकरण कैसे करें? भारत के चुनाव आयोग की वेबसाइट देखें https://eci.gov.in/voter/voter-registration/

वोट डालने का हमारा अधिकार - संविधान क्या कहता है?

अनुच्छेद 324 - इस अनुच्छेद में संविधान भारत के राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति पदों के लिए, और संसद के दोनों सदनों और विधानसभाओं के लिए चुनाव कराने के लिए भारत के चुनाव आयोग को ज़िम्मेदारी देता है | इस अनुच्छेद में चुनाव आयोग को ऐसे चुनाव कराने के लिए नियंत्रण और निगरानी की शक्तियाँ भी देता है |

अनुच्छेद 325 - इस अनुच्छेद में कहा गया है कि भारत के चुनाव आयोग द्वारा हरेक निर्वाचन क्षेत्र के लिए एक मतदाता सूची तैयार की जाएगी | मतदाता सूची में एक निर्वाचन क्षेत्र के सभी योग्य मतदाताओं का रेकॉर्ड होता है | यह अनुच्छेद कहता है कि किसी को भी सिर्फ़ उसके धर्म, नस्ल, जाति, सेक्स या इनमें से किसी भी आधार पर मतदाता सूची में नाम शामिल किए जाने से मना नहीं किया जा सकता है | इसका मतलब यह है कि अगर आप चुनाव अधिकारियों के पास जाकर अपना नाम मतदाता सूची में शामिल किए जाने की माँग करते हैं और वे जाति, धर्म, जेंडर या नस्ल का बहाना बना कर इससे इन्कार करते हैं तो ये अधिकारी संविधान के ख़िलाफ़ काम कर रहे होंगे |

अनुच्छेद 326 - यह अनुच्छेद कहता है कि 18 साल की उम्र से ऊपर भारत का हरेक नागरिक एक मतदाता के रूप में पंजीकृत होने का हक़दार है, बशर्ते क़ानून के ज़रिए उसको इसके अयोग्य न ठहराया गया हो |

आज़ादी के मौक़े पर 18 साल से ऊपर हरेक व्यक्ति को वोट डालने का अधिकार देते हुए भारत ने एक रेडिकल काम किया था | असल में उस वक़्त कई दूसरे विकसित देशों में महिलाओं, ब्लैक लोगों या अल्पसंख्यक धर्मों के लोगों को वोट डालने से बाहर रखा गया था | इसलिए जब आप पहली बार वोट डालने जा रहे हों, तब आप संविधान सभा के इस ऐतिहासिक फ़ैसले को फिर से जीवंत बना रहे हैं |

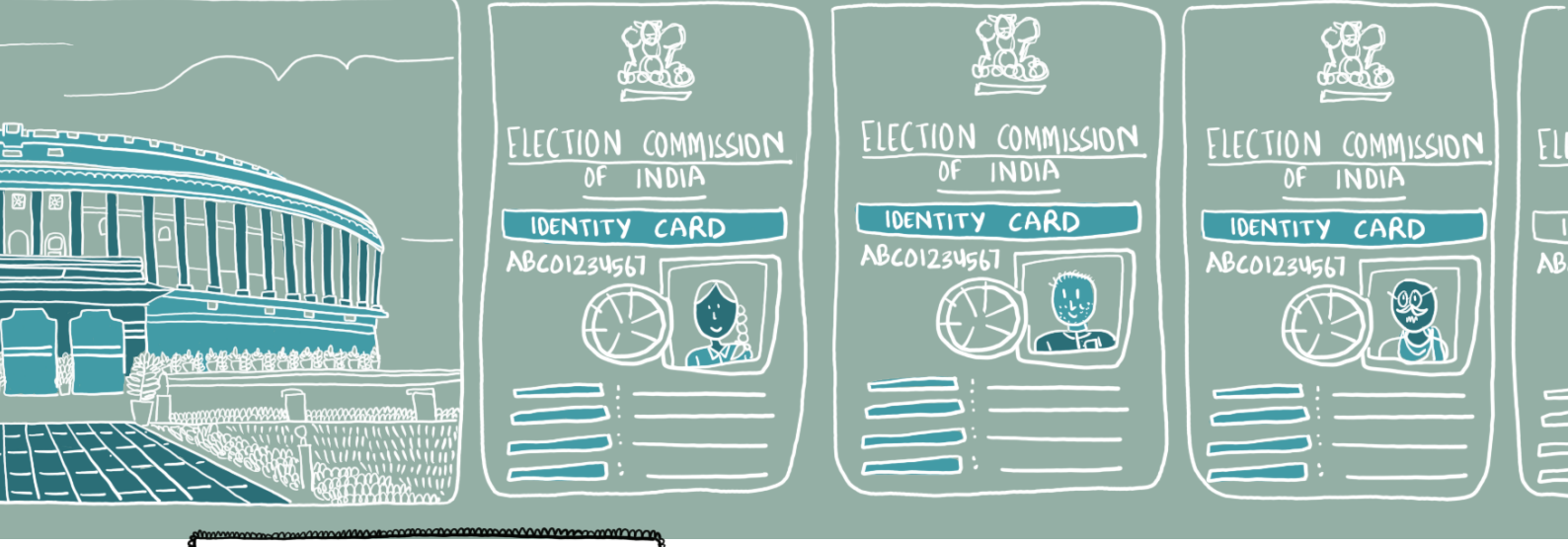

वोट डालने के लिए पंजीकृत हों

यह सुनिश्चित करना भारतीय चुनाव आयोग का काम है कि जिनके पास भी वोट डालने का अधिकार है, उसमें से किसी भी व्यक्ति को ऐसा करने से न रोका जाए | लेकिन यह सुनिश्चित करना आपकी ज़िम्मेदारी है कि आप वोट डालने के लिए पंजीकृत हों | चुनाव पंजीकरण अधिकारी आपके आवेदन को देखेंगे और इसके बाद ही आपका नाम मतदाता सूची में जोड़ा जाएगा |

चुनाव आयोग के मुताबिक, 2014 में लोक सभा चुनावों के दौरान 18-19 साल आयु वर्ग के 5.04 करोड़ भारतीयों में से सिर्फ़ 45% भारतीय ही वोट डालने के लिए पंजीकृत थे | इसका मतलब यह है कि 27310000 युवा भारतीय उस चुनाव में वोट नहीं डाल सकते थे और नहीं डाल पाए | यानी 2.73 करोड़ युवा भारतीयों की आवाज़ संसद में नहीं पहुँच पाई | आप इसकी इजाज़त न दें कि दूसरे लोग आपकी तरफ़ से सोचें और एक ऐसे भविष्य की कल्पना करें जो आपकी इच्छाओं के अनुकूल न हो | आप वोट डाल कर अपना समर्थन या विरोध दर्ज कराएँ | इसे सुनिश्चित करें कि आपकी आवाज़ सुनी जाए |

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 इस मामले में अहम है कि इसमें मतदाता सूची तैयार करने के तरीक़ों को लेकर नियम स्थापित किए गए हैं | साथ ही ऐसी स्थितियाँ बताई गई हैं, जिनमें किसी व्यक्ति को इस सूची से बाहर रखा जा सकता है |

- तो कैसे व्यक्ति वोट नहीं डाल सकते हैं? जो भारत के नागरिक नहीं हैं |
- ऐसे व्यक्ति जिनके बारे में अदालत ने कहा कि वे मानसिक रूप से सक्षम नहीं हैं |
- ऐसे व्यक्ति जो भ्रष्टाचार या चुनाव संबंधी दूसरे अपराधों के लिए क़सूरवार ठहराए जा चुके हैं |

आप वोट डालने से अयोग्य न ठहरा दिए जाएँ, इसके लिए आपको कुछ चीजों को याद रखना ज़रूरी है |

- आप सिर्फ़ एक ही निर्वाचन क्षेत्र में मतदाता के रूप में पंजीकृत हों |
- एक निर्वाचन क्षेत्र में आप एक से अधिक बार पंजीकृत न हों
- इसे सुनिश्चित करें कि आप जिस निर्वाचन क्षेत्र में रहते हैं उसी में पंजीकृत हों |

पता लगाएँ कि अगले दौर के चुनाव कौन-से हैं और कब होने हैं | ये आम चुनाव हो सकते हैं, राज्य विधान सभा के चुनाव हो सकते हैं, नगरपालिका/पंचायत या स्थानीय निकायों के चुनाव हो सकते हैं | या फिर ये उपचुनाव हो सकते हैं |

इस बात पर गौर करना ज़रूरी है कि संविधान की प्रस्तावना “हम भारत के लोग” से शुरू होती है और इसका अंत “अपने आपको यह संविधान सौंपते हैं” से होता है | ये हम लोग हैं जो मतदान की प्रक्रिया में भागीदारी करके अपने लोकतंत्र की रक्षा करते हैं |

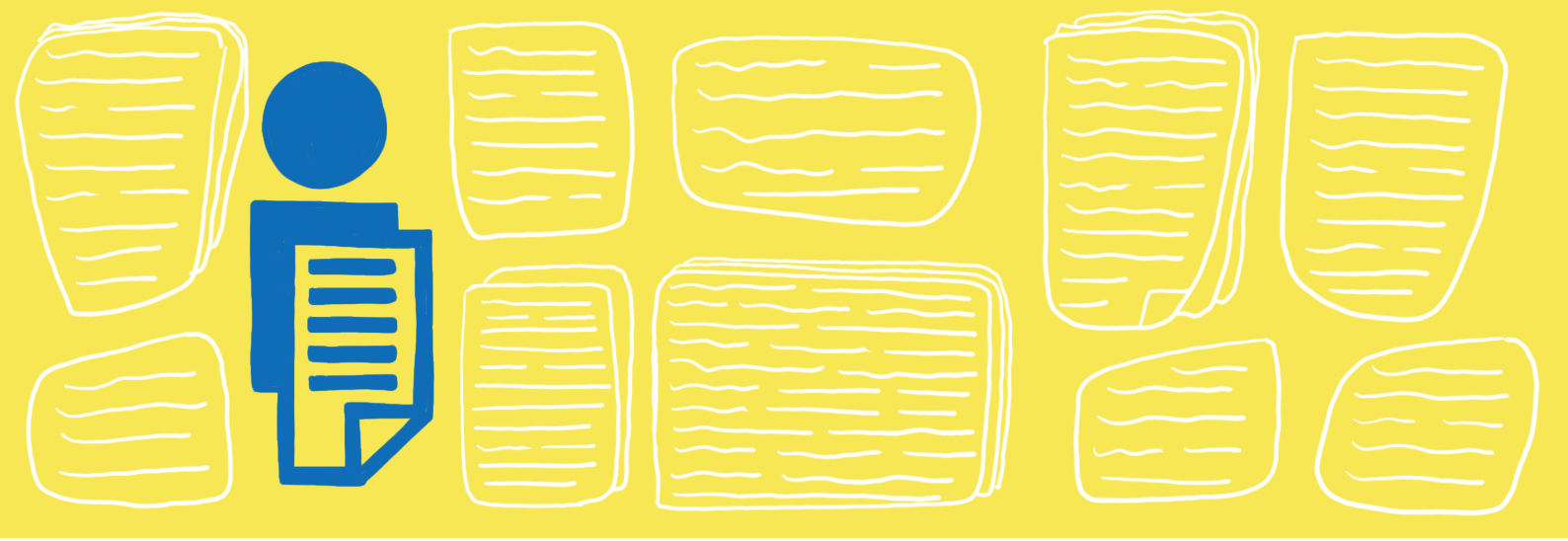

संसद को शक्ति आपसे और भारत के सभी नागरिकों से मिलती है - यह आपके वोट से आती है. इससे फ़र्क़ नहीं पड़ता कि आप किस जेंडर, जाति, धर्म या किसी दूसरी पहचान वाले व्यक्ति हैं. क्या आपकी उम्र 18 साल से ऊपर है और आप भारत के नागरिक हैं? वोट डालना आपका अधिकार और कर्तव्य है.

सूचना का अधिकार (RTI) अधिनियम, 2005, कार्यकर्ताओं और पत्रकारों द्वारा किए गए एक लंबे आंदोलन का परिणाम है और यह नागरिक समाज की कार्रवाई का एक शानदार उदाहरण है। इस अधिनियम के इतिहास को जानें कि यह कैसे अस्तित्व में आया।

आरटीआई अधिनियम क्या है?

- यह अधिनियम कहता है कि सभी नागरिकों को सूचना का अधिकार है. सभी नागरिक किसी भी सार्वजनिक कार्यालय/अधिकारी से सूचना माँग सकते हैं.

जैसे कि भरसिंह वासवा दक्षिण गुजरात में समोर नाम के एक गाँव से आने वाले एक आदिवासी हैं. उन्होंने कक्षा 7 तक पढ़ाई की है. भारत के एक नागरिक के रूप में उनके पास अपने गाँव में बन रही सड़क की गुणवत्ता के बारे में जानने का अधिकार है. इससे फ़र्क़ नहीं पड़ता कि उनकी सामाजिक हैसियत और योग्यता क्या है.

- आरटीआई अधिनियम के तहत सार्वजनिक प्राधिकार से जुड़े किसी भी अधिनियम, नीति या फ़ैसले से जुड़ी विभिन्न क़िस्म की सूचनाएँ माँगी जा सकती हैं. ये आंतरिक मेमो, ईमेल, राय, सलाह, प्रेस रिलीज़, सर्कुलर, आदेश, आधिकारिक कार्यवाहियों संबंधी काग़ज़, नमूने आदि हो सकते हैं.

वासवा ने जब यह देखा कि उनके गाँव में बन रही सड़क में ख़राब गुणवत्ता की सामग्री लगाई जा रही है तो उन्होंने यह जानने के लिए एक आरटीआई आवेदन जमा किया कि सड़क में किस क़िस्म की सामग्री लगाने की अपेक्षा की गई थी, इंजीनियर द्वारा जमा की गई निरीक्षण रिपोर्ट क्या कहती थी और इस काम की निगरानी का ज़िम्मा किसके हाथ में था. उन्हें जो ब्योरे दिए गए, वे बनी हुई सड़क की हक़ीक़त के उलट थे. इस सूचना के साथ वे राज्य निगरानी आयोग के पास जाकर एक जाँच की माँग करने में कामयाब रहे. सड़क बनाने के लिए ज़िम्मेदार ठेकेदार के खिलाफ कार्रवाई की गई और उसका लाइसेंस एक साल के लिए निलंबित कर दिया गया.

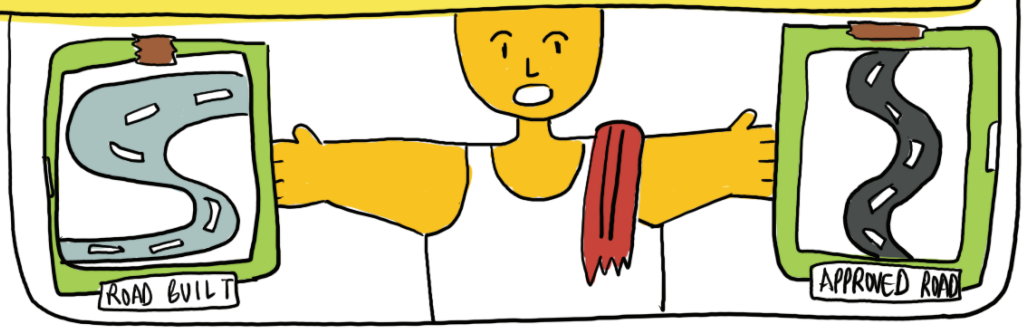

याद रखें कि...

* आप सीडी में या पेन ड्राइव में इलेक्ट्रॉनिक फ़ॉर्म में सूचना की माँग कर सकते हैं. आप ख़ुद जाकर दस्तावेज़ों को देख सकते हैं और नोट्स ले सकते हैं.

* यह अधिनियम सभी सार्वजनिक प्राधिकारों से यह माँग भी करता है कि वे ख़ुद जनता से जुड़ी सूचनाओं को सहज रूप में अपनी वेबसाइट पर मुहैया कराएँ.

* आरटीआई आवेदन भेजते समय आपको सूचना माँगने की वजह बताना ज़रूरी नहीं है.

* प्राधिकार के लिए माँगी गई सूचना को 30 दिनों के भीतर मुहैया कराना कानूनन ज़रूरी है.

* अगर सार्वजनिक प्राधिकार 30 दिनों के भीतर जवाब नहीं देते, या आपकी अर्जी को ख़ारिज कर देते हैं या उनका जवाब अधूरा या असंतोषजनक है, तब सूचना माँगने वाला नागरिक इसके ख़िलाफ़ अपील कर सकता है. इसके लिए अपील को राज्य सूचना आयोग के यहाँ दर्ज किया जा सकता है जिसकी स्थापना हरेक राज्य में की गई है. इसके ऊपर केंद्रीय सूचना आयोग काम करता है.

* अगर कोई सार्वजनिक प्राधिकार सूचना का अधिकार या इसके प्रावधानों का उल्लंघन करता है, तो उन्हें सज़ा हो सकती है.

वासवा ग्राम सभा से सूचना माँगी थी कि उसकी जमा की गई शिकायत पर कौन-सी कार्रवाई की गई है, और जब ग्राम सभा यह सूचना उसे देने में नाकाम रही तब वे शिकायत दर्ज कराने के लिए गुजरात सूचना आयोग पहुँचे. इसके बाद समोर ग्राम सभा ने अपने पास जमा की गई शिकायत पर कार्रवाई की.

आरटीआई कैसे दाखिल करें

आरटीआई दाखिल करना एक बहुत ही सरल और सस्ता तरीक़ा है.

क़दम 1
आप जो सूचना पाना चाहते हैं, वह किसा सार्वजनिक कार्यालय और जन सूचना अधिकारी से हासिल होगी, इसकी पहचान करें.

क़दम 2 आवेदन लिखें. भाषा साफ़ और सरल होना ज़रूरी है. निम्नलिखित जानकारी का उल्लेख करना ज़रूरी है.
- नाम
- पता
- भुगतान की विधि
- संपर्क, अगर आप दस्तावेज़ों को ख़ुद जाँचना चाहते हैं या उनकी एक प्रति हासिल करना चाहते हैं तो इसका उल्लेख करें

क़दम 3 ऑनलाइन या किसी पोस्टऑफिस के ज़रिए 10 रुपए मनीऑर्डर करें. कुछ मामले में इसकी छूट दी गई है. जैसे कि ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को यह राशि अदा करनी ज़रूरी नहीं है. इस छूट का लाभ उठाने के लिए ग़रीबी रेखा से नीचे रहने का बीपीएल प्रमाण पत्र साथ में लगाना ज़रूरी है.

क़दम 4 आवेदन जमा करें. इसको ऑफ़लाइन भरा जा सकता है, डाक से भेजा जा सकता है, या ऑनलाइन भी सरकारी पोर्टल के ज़रिए जमा किया जा सकता है.

वासवा ने दूरदर्शन पर आरटीआई एक्ट के बारे में सुनने के बाद आरटीआई हेल्पलाइन की मदद ली, जिसकी स्थापना गुजरात राज्य सरकार ने की है. इसे माहिती अधिकार गुजरात पहेल कहा जाता है.

सुनिश्चित करें कि आपने
- ऐसी सूचना नहीं माँगी है जिसको आरटीआई अधिनियम के सेक्शनों 8 और 9 के तहत उजागर नहीं किया जा सकता है.
- जो जानकारी माँगी है वह पहले से ही सार्वजनिक जानकारी में नहीं है या किसी सार्वजनिक कार्यालय की वेबसाइट पर नहीं है.
- वही सूचना माँगी है जो किसी सार्वजनिक प्राधिकार के पास है या उसके नियंत्रण में है.
- ऐसी सूचना माँगी है जिसे निर्धारित समयावधि में मुहैया कराया जा सकता है और वह सार्वजनिक प्राधिकार पर अनुचित बोझ नहीं डालेगी.
- ऐसी सूचना माँगी है जो किसी जनहित या गतिविधि से जुड़ी हुई है.
- ऐसा आवेदन नहीं भरा है जो फूहड़, चिढ़ाने वाला या बदनीयती भरा हो

आरटीआई का इस्तेमाल करने में बाधाएँ

सार्वजनिक कार्यालय किसी न किसी छूट का हवाला देकर सूचना देने से इन्कार कर सकते हैं.

सार्वजनिक कार्यालय सूचना देने में देरी कर सकते हैं या अधूरी सूचना दे सकते हैं. यहाँ तक कि नागरिकों द्वारा अपील दायर किए जाने के बाद भी, लंबित अपीलों की भारी संख्या को देखते हुए इस पर कार्रवाई में देर हो सकती है.

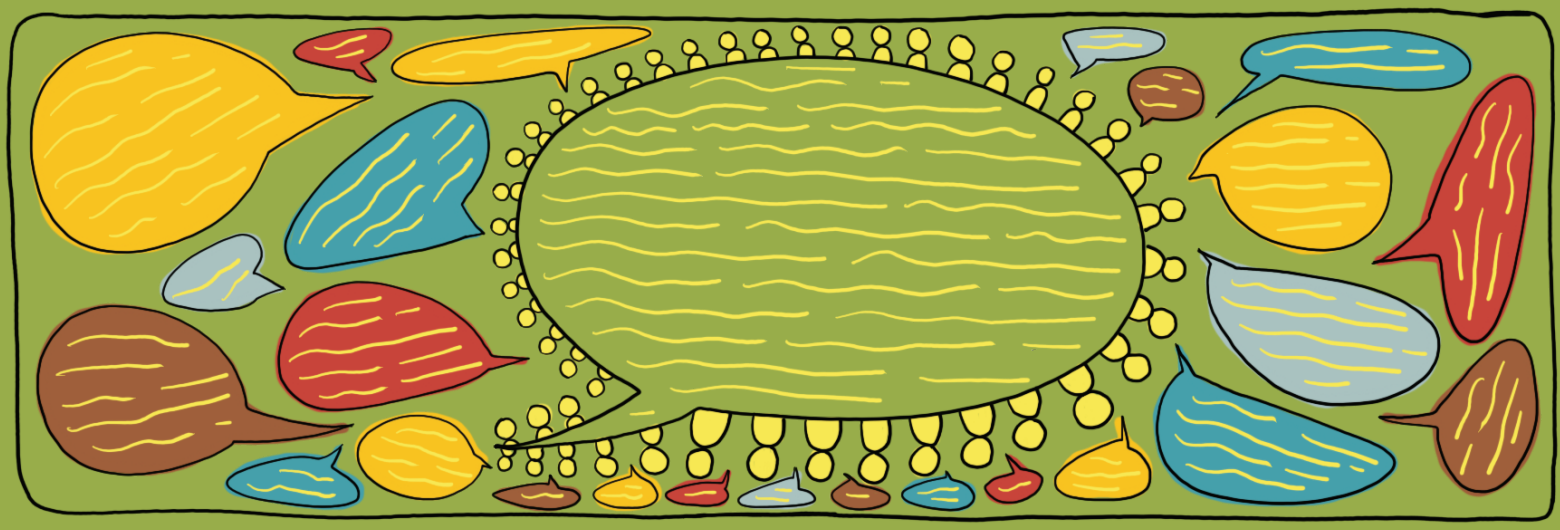

वासवा एक सच्चे आरटीआई योद्धा हैं, लेकिन जो बात उन्हें कारगर योद्धा बनाती है वो यह है कि वे सूचना हासिल करने के बाद रुक नहीं गए. उन्हें जो सूचना मिली थी, उसके आधार पर उन्होंने संबद्ध कार्यालय से संपर्क करके यह सुनिश्चित किया कि उन्होंने जिस समस्या की पहचान की थी वह हल हो. सूचना हासिल करना एक अहम क़दम है, लेकिन इसके बाद भी क़दम उठाना ज़रूरी है. कार्रवाई करना ज़रूरी है. एक नागरिक के रूप में संभव है कि हम सड़कें बनवा पाने में कामयाब न हों, लेकिन हम उन लोगों से बात कर सकते हैं जो इसके लिए ज़िम्मेदार हैं और इसके बारे में पता लगाते रह सकते हैं.

जिस तरह आपको पता होना चाहिए कि आरटीआई आवेदन किसके पास भेजना है, उसी तरह आपको यह जानना भी ज़रूरी है कि किसी सार्वजनिक कार्यालय संबंधी समस्या में किससे संपर्क किया जाए. तो बदलाव लाने के लिए आपको किन लोगों से बात करना ज़रूरी है?

नीति और क़ानून कौन बनाते हैं?

क़ानून विधायिकाओं में बनते हैं. घर बनाने वाले उदाहरण में ये वो लोग थे जो हरेक व्यक्ति का प्रतिनिधित्व कर रहे थे और जिन्होंने अंतिम तौर पर यह फ़ैसला लिया कि घर कितनी मंज़िलों का होगा और इसका आम ढाँचा क्या होगा. हमारे संविधान में इन विधायिकाओं के प्रावधान दिए गए हैं

- भारत के संसद में दो सदन हैं - लोक सभा और राज्य सभा
- हरेक राज्य में विधान सभा और कुछ राज्यों में विधान परिषद
- स्थानीय स्तर पर नगर परिषद और पंचायत

इन्हें लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के ज़रिए हमारे लिए क़ानून बनाना होता है. इसका मतलब यह है कि उन्हें क़ानून बनाने के दौरान पक्षकार लोगों (stakeholder) से संवाद करना होता है. इस मक़सद से, विधायी संस्थाएँ ऐसी समितियाँ बनाती हैं जो प्रस्तावित क़ानून और नीतियों पर लोगों से टिप्पणियाँ आमंत्रित करती हैं.

जैसे कि स्त्री एवं युवा मामले पर संसदीय समिति ने 2021 में लड़कियों की शादी की न्यूनतम आयु 21 वर्ष से बढ़ाने के प्रस्ताव के बारे में टिप्पणियाँ माँगी थीं और युवाओं और स्त्रियों के समूहों से अनेक विचार हासिल किए.

नीति और क़ानून कौन लागू करते हैं?

विधायिका जो क़ानून बनाती है, उसको लागू करने की ज़िम्मेदारी कार्यपालिका या सरकार पर है. ये शासन का काम देखती है. घर बनाने के उदाहरण में, हम कार्यपालिका या सरकार की तुलना उन लोगों से कर सकते हैं जिन्होंने प्रतिनिधियों द्वारा लिए गए फ़ैसले के मुताबिक़ असल में घर बनाया. सरकार योजनाएँ, कार्यक्रम, नियम, और नियमन बनाती है जो क़ानूनों को लागू करना संभव बनाते हैं.

जैसे कि भारत सरकार ने नई शिक्षा नीति पर व्यापक सलाह-मशविरा किया. इसे 2 लाख से अधिक सुझाव हासिल हुए, जिनको 2020 में जारी की गई अंतिम नीति में ध्यान में रखा गया

सार्वजनिक सलाह-मशविरे में भागीदारी

सरकार 2014 में प्राक-विधायी परामर्श नीति (पीएलसीपी) ले आई थी, जिसके साथ किसी विधेयक, नियम, योजना आदि को तैयार करने से पहले सार्वजनिक परामर्श लेने की अधिक कोशिशें की जाने लगी हैं. यह नीति विशेष रूप से इसकी पहचान करती है कि सार्वजनिक परामर्श लेने से सरकार को अधिक पारदर्शी और सूचनाओं पर आधारित (informed) बनाने में मदद मिलती है. इससे आम सहमति बनाने में मदद मिलती है और जब इसको लागू किया जाएगा तो लोगों में इसको लेकर कम प्रतिरोध होगा. सार्वजनिक परामर्श यह सुनिश्चित करेगा कि कोई क़ानून या नीति बनाने से पहले विभिन्न पक्षकारों को ध्यान में रखा गया है.

सार्वजनिक परामर्श क्यों अहम है?

i. हमारे चुने हुए जनप्रतिनिधियों को पता चलता है कि लोग क्या सोच रहे हैं.
ii. विभिन्न पक्षकारों की राय को ध्यान में रखा जाता है.
iii. दिए गए विचारों के आधार पर हरसंभव अच्छे क़ानून या योजनाओं का निर्माण हो सकता है.

□. आप ऐसी किसी योजना, नीति या क़ानून के बारे में जानते हैं जिसके लिए सरकार ने लोगों से राय माँगी हो? अगर हाँ, तो कौन-सी योजना, नीति या क़ानून?
□□. क्या आपने कभी किसी प्रस्तावित क़ानून, नीति या योजना पर सार्वजनिक परामर्श में भागीदारी की है? आपका अनुभव कैसा था? परामर्श में भाग लेने के लिए आपने कौन-सी प्रक्रिया अपनाई, आपने इसकी तैयारी कैसे की? इसका नतीजा क्या रहा, क्या आपके विचारों को क़ानून या योजना में शामिल किया गया?
□□□. क्या आप भविष्य में किसी प्रस्तावित क़ानून, नीति या योजना पर सार्वजनिक परामर्श में भागीदारी करेंगे?
□□. आप अपने आस-पास के लोगों को, अन्य युवाओं को एक सक्रिय नागरिक बनने के लिए किस तरह प्रेरित करेंगे?

सक्रिय नागरिक बनने के कौशल कैसे सीखें?

- अपनी राय बनाने के लिए विशेषज्ञों से संवाद करें |
- संसद और विधानसभाओं के सत्रों को देखें |
- क़ानून, योजनाओं के मसौदों से जुड़ी ख़बरों को देखें |

इन दिनों अनेक सरकारी विभाग सीधे युवाओं से जुड़ते हैं, जिसमें वे विभिन्न क़ानूनों और योजनाओं को लागू करने में प्रशासन के साथ काम करने के लिए फ़ेलोशिप देते हैं | जैसे कि मुख्य मंत्री अर्बन लीडर फ़ेलोशिप के ज़रिए युवा लोग दिल्ली सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के साथ काम कर सकते हैं |

नीति बनाने में योगदान देने में आनेवाली संभावित मुश्किलें

* हमारे चुने हुए जनप्रतिनिधि या सरकार में सार्वजनिक परामर्श लेने की इच्छा का अभाव हो सकता है |
* जिन क़ानून और योजनाओं पर सार्वजनिक परामर्श माँगा जा रहा है, उनमें से कुछ इतने तकनीकी रूप से बारीकी वाले हो सकते हैं कि आम नागरिक या युवा समूह की समझ से बाहर हो |
* कोई परामर्श जिस भाषा और शैली में लिया जाता है, उससे भी कई लोग इसमें भागीदारी करने में अक्षम हो सकते हैं |
* कई बार लोग और ख़ास कर युवक नीतियाँ बनाने में योगदान नहीं कर पाते हैं क्योंकि वे नहीं जानते हैं कि सूचना कहाँ मिलती है या हो सकता है कि वे अपने जीवन के रोज़मर्रा के संघर्षों में इतने व्यस्त हों कि वे ऐसी पहलक़दमियों पर ध्यान नहीं दे सकते हों |

एकवोकेसी क्या होती है?

इस बात को समझाने के लिए हम आपको एक सफल एडवोकेसी की कहानी सुनाएँगे।

मध्य राजस्थान के गाँवों से मज़दूरों और किसानों ने मिलकर 1990 में मज़दूर किसान शक्ति संगठन (एमकेएसएस) नाम का एक जनसंगठन बनाया। मूल संघर्ष एक ज़मींदार के ख़िलाफ़ था जिसने सामुदायिक ज़मीन पर ग़ैरक़ानूनी क़ब्ज़ा बना रखा था। आख़िरकार यह संघर्ष न्यूनतम मज़दूरी के लिए संघर्ष में बदल गया। लेकिन उन्होंने यह बात समझी कि उन्हें अपने संघर्ष को प्रभावी बनाने के लिए पंचायत समेत स्थानीय सरकारी संगठनों के वित्तीय रेकॉर्ड तक पहुँच होना ज़रूरी है। इस तरह सूचना के लिए माँग शुरू हुई, ताकि वे सरकार को जवाबदेह बना सकें। पहले जो बात एक स्थानीय संघर्ष थी, वह एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन में बदल गई जिसका अंजाम 2005 में सूचना का अधिकार अधिनियम लागू किए जाने में हुआ। यह सब इसलिए हो पाया कि लोग अपने अधिकारों की माँग के लिए आवाज़ उठाने के लिए एकजुट हुए।

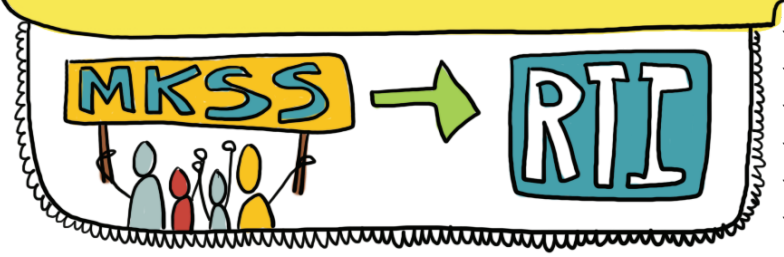

यह कहानी बताती है कि बदलाव लाने के लिए लोगों का साथ आना, संघर्ष करना, क़ानूनों में बदलाव की माँग करना और उस बदलाव को साकार करने के लिए काम करना ज़रूरी है। इसलिए एडवोकेसी अहम है क्योंकि अगर हम ख़ुद अपने लिए नहीं आवाज़ उठाते हैं तो कोई भी हमारे लिए आवाज़ नहीं उठाएगा।

मक़सद के लिए योजना

किसी मक़सद के लिए एडवोकेसी करने के लिए हम सुझावों के रूप में कुछ रणनीतियाँ पेश कर रहे हैं। मुमकिन है कि कोई अकेली रणनीति अपने आप में काम न करे, इसलिए आपको उन्हें मिला-जुला कर उपयोग में लाना पड़ेगा। यह इस पर निर्भर करता है कि आपके पास कैसे संसाधन हैं, आपका मुद्दा क्या है और आपको किसके सामने आवाज़ उठानी है।

नीति बनाने वालों के पास याचिकाएँ और चिट्ठियाँ लिखें: आम तौर पर ऐसी याचिकाओं और चिट्ठियों में मुद्दे का ब्योरा और उसके कुछ सबूत होते हैं। साथ ही इनमें कार्रवाई का तरीका, नीति में बदलाव के सुझाव होते हैं जो मुद्दे को हल कर सकते हैं।

2020 में सरकार ने एनवायरमेंट इम्पैक्ट नोटिफिकेशन के मसौदे पर टिप्पणियाँ आमंत्रित कीं, जिसमें विकास परियोजनाओं को मंज़ूरी देने से पहले पर्यावरण पर होने वाले उनके प्रभावों का एक जायज़ा ज़रूरी बनाया गया था। नोटिफिकेशन को सिर्फ़ अंग्रेज़ी और हिंदी में उपलब्ध कराया गया और टिप्पणियाँ भेजने के लिए महज़ कुछ ही दिन दिए गए थे। फ्राइडेज़ फ़ॉर फ्यूचर जैसे युवाओं के नेतृत्व वाले पर्यावरणवादी समूहों ने लाखों युवाओं को एकजुट किया कि वे मंत्रालय को इस नोटिफिकेशन पर अपनी चिंताओं और सरोकारों को भेजें और बदलाव सुझाएँ। आख़िरकार सरकार ने समयसीमा बढ़ाई और नोटिफिकेशन को 22 भाषाओं में प्रकाशित किया।

एक समूह बनाएँ - युवा अपने समूह, समाज (सोसायटी) और संगठन भी बना सकते हैं | वे अपनी पहलक़दमियाँ शुरू कर सकते हैं जो नीतियाँ बनाने वालों के साथ मिल कर काम करें और नीतियाँ बनाने में योगदान दें | नीतियाँ बनाने में युवाओं द्वारा शुरू की गई इन पहलक़दमियों का बड़ी भूमिका रही है - हकदर्शक, सिविस, समग्र, स्वनीति इनिशिएटिव, माध्यम इनिशिएटिव, यंग लीडर्स फ़ॉर एक्टिव सिटिज़नशिप (YLCA), झटका, आदि |

बैठकें, सेमिनार, चर्चाएँ आयोजित करें - नागरिकों के एक बड़े और व्यापक समूह के बीच में जागरुकता बनाने के लिए इनका आयोजन किया जा सकता है | इनसे आपके द्वारा चलाई जा रही पैरवी की कोशिशों में मदद के लिए नेटवर्क तैयार हो सकते हैं और ऐसे सबूत और शोध तैयार किए जा सकते हैं जिनसे आपके मक़सद को मज़बूती मिलेगी |

ऑनलाइन सिग्नेचर अभियान चलाएँ - यह भी एडवोकेसी का एक बहुत जाना-माना तरीक़ा है, जहाँ Change.org जैसे किसी मंच पर एक याचिका शुरू की जा सकती है और दूसरे नागरिकों के हस्ताक्षर जुटा कर नीतियाँ बनाने वालों पर कार्रवाई करने के लिए दबाव बनाए जा सकते हैं |

मीडिया और सोशल मीडिया अभियान चलाएँ - प्रेस सम्मेलनों, अख़बारों में लेखों, समाचार चैनलों में साक्षात्कारों, समर्थकों द्वारा शेयर किए जाने वाले सोशल मीडिया अभियान चला कर नीतिगत मुद्दों को जनता के सामने अधिक से अधिक लाया जा सकता है और जागरुकता बनाई जा सकती है | इससे समर्थन जुटाने और नीतियाँ बनाने वालों को कार्रवाई करने के लिए प्रोत्साहित करने में मदद मिलेगी |

कला, संस्कृति का इस्तेमाल बदलाव के लिए करें - अनेक अभियानों में कविताएँ लिखी जाती हैं, गीत रचे जाते हैं, पोस्टर और दूसरी तरह की रचनात्मक चीजें तैयार की जाती है | इससे दूसरे नागरिकों और नीतियाँ बनाने वालों को अपनी माँगों से जोड़ने में मदद मिलती है |

शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन करें - किसी नीति या किसी नीतिगत मुद्दे पर बदलाव की माँग को रेखांकित करने के लिए अपना असंतोष या असहमति ज़ाहिर करने का यह एक क़ानूनी तरीक़ा है जिसका व्यापक इस्तेमाल होता है | 2011 में अधिकतर युवाओं के नेतृत्व में इंडिया अगेन्स्ट करप्शन के बैनर से एक आंदोलन की शुरुआत हुई थी, जिसकी माँग थी कि लोकपाल नाम की एक संस्था बनाने के लिए एक कड़ा क़ानून लाया जाए | यह संस्था सरकारी अधिकारियों के ख़िलाफ़ भ्रष्टाचार के मामलों की जाँच करती | राष्ट्रव्यापी आंदोलनों के बाद आख़िरकार संसद ने 2013 में लोकपाल विधेयक पारित कर दिया |

अदालत में याचिका दाख़िल करें - कभी-कभी किसी नीति में बदलाव लाने के लिए अदालत के पास जाना अहम होता है | वे ऐसे नीतिगत दिशानिर्देश जारी कर सकती हैं और सरकार को उन पर कार्रवाई करने को प्रोत्साहित कर सकती हैं |

बेंगलुरू में झटका नाम से युवाओं द्वारा चलाए जा रहे एक नागरिक अभियान ने कर्नाटक सरकार से माँग करते हुए एक याचिका की शुरुआत की कि वह शहरी गतिशीलता से जुड़े मुद्दों को दूर करने के लिए एक क़ानून ले आए | वे कई विधायकों से मिले और अपनी याचिकाएँ जमा कीं | उन्होंने भी सरकार से इस दिशा में एक विधेयक ले आने की माँग की | आख़िरकार बेंगलुरू मेट्रोपोलिटन लैंड ट्रांस्पोर्ट अथॉरिटी बिल 2022 में विधानसभा में पेश किया गया |

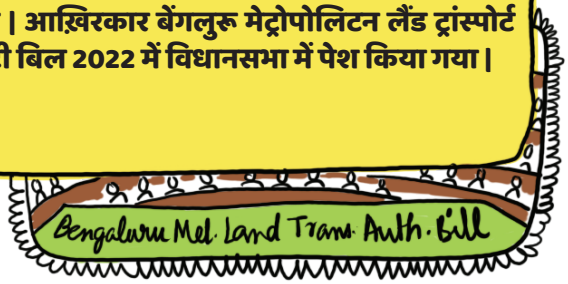

क्या आप ऐसे किसी नीतिगत मुद्दे के बारे में सोच सकते हैं जिसकी आप एडवोकेसी करना चाहेंगे? अगर हाँ तो आप कौन से क़दम उठाएँगे और आपकी रणनीति क्या होगी?

क्या आपने किसी नीतिगत बदलाव की माँग करने वाले किसी विरोध प्रदर्शन में हिस्सा लिया है? अगर हाँ तो किस मुद्दे पर? ऐसा करके आपको कैसा लगा और उस प्रोटेस्ट का नतीजा क्या निकला?

सरकार की किसी नीति के ख़िलाफ़ शांति पूर्ण विरोध प्रदर्शन करना क्या एक मौलिक अधिकार है? अगर हाँ तो इस अधिकार पर किस तरह की सीमाएँ लगाई जा सकती हैं?

नीति निर्माता बनें

नीतियाँ बनाने की प्रक्रिया में और नीतियाँ बनाने वालों के साथ काम करते हुए एडवोकेसी करना बदलाव लाने और एक सक्रिय व संलिप्त (engaged) नागरिक बनने का एक सशक्त तरीक़ा है | लेकिन सिर्फ़ चुनाव लड़ कर और नीति निर्माता बनते हुए ही कोई व्यक्ति व्यवस्था के भीतर से बदलाव को प्रभावित कर सकता है |

इक्कीस साल की लक्ष्मीबाई खनन की गतिविधियों के चलते अपने समुदाय की सेहत और आजीविका के मुद्दों से चिंतित थीं | उन्होंने सरपंच के लिए चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया और वे कबरा ग्राम परिषद, भीलवाड़ा, राजस्थान की सरपंच बन गईं | अब ये युवा आदिवासी राजनेता चाहती हैं कि दूसरे युवा लोग भी सामने आएँ और पंचायत प्रशासन के लिए चुनाव लड़ें |

नीति निर्माता कौन लोग बन सकते हैं?

- 25 साल की उम्र से अधिक कोई भी व्यक्ति लोक सभा और राज्य विधान सभाओं के लिए चुनाव लड़ सकता है |
- पंचायतों और नगरपालिकाओं में चुनाव लड़ने की न्यूनतम उम्र 21 साल है |

2021 में 21 साल की दो युवा लड़कियों ने केरल में इतिहास रचा|

आर्या राजेंद्रन और रेशमा मरियम रॉय भारत में सबसे युवा मेयर और पंचायत अध्यक्ष चुनी गईं |

हाल में हुए कुछ राज्य विधानसभा चुनावों में हमने युवाओं की अच्छी भागीदारी देखी और कुछ राज्य विधान सभा चुनावों में युवाओं ने उतनी अच्छी भागीदारी नहीं दिखाई | जैसे कि 2023 में हुए नागालैंड विधानसभा चुनावों में कुल उम्मीदवारों में से सिर्फ़ 10.32% ही 40 साल से कम उम्र के थे | लेकिन 2022 में हुए गुजरात विधानसभा चुनावों में कुल उम्मीदवारों के क़रीब 34% उम्मीदवार 40 साल से कम उम्र के थे | 2022 में ही हुए पंजाब विधानसभा चुनावों में कुल उम्मीदवारों के 27% उम्मीदवार 40 साल से कम उम्र के थे और ऐसे कुछ उम्मीदवारों ने वरिष्ठ राजनेताओं तक को हराया | जैसे कि एक मोबाइल फ़ोन रिपेयर शॉट चलाने वाले 35 साल के एक युवक ने 2022 में पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री को चुनावों में शिकस्त दी |

छात्र राजनीति से शुरुआत

- अपने जीवन में आगे चल सक्रिय राजनेता बनने वाले कई लोग अपने छात्र दिनों में राजनीति में भागीदारी से शुरुआत करते हैं |
- स्कूल या कॉलेज में पढ़ाई करते हुए किसी राजनीतिक छात्र समूह से जुड़ने, राजनीतिक गतिविधियों, आंदोलनों में भागीदारी करने या चुनाव लड़ने से ऐसे अनुभव मिलते हैं, जो बताते हैं कि किस तरह एक अच्छे मक़सद के लिए राजनीति का इस्तेमाल किया जा सकता है |

- अक्सर छात्रों के राजनीतिक समूह इस बात को पक्का बनाने में अहम भूमिका निभाते हैं कि कॉलेजों में छात्रों को उचित सुविधाएँ मिलें, फ़ी में अनचाही बढ़ोतरी न हो, और कॉलेज या विश्वविद्यालय प्रशासन उचित ढंग से काम करे आदि |
- राजनीति में रुचि रखने वाले युवाओं को छात्र राजनीति के जरिए ही राजनीतिक अभियानों को चलाने, नीतिगत बदलावों के लिए एडवोकेसी करने के अनुभव मिलते हैं | ये उन्हें सक्रिय नागरिक बनने में मदद करते हैं भले ही वे आगे चल कर कोई चुनाव न लड़ें |

जनीति में युवाओं की भागीदारी के सामने बाधाएँ

* युवाओं को अक्सर लगता है कि राजनीति एक जोखिम भरा पेशा है | सुरक्षा से जुड़ी चिंताएँ उन्हें राजनीति में शामिल होने से दूर रख सकती हैं |

* कई युवक चुनाव लड़ने के लिए सामने नहीं आते क्योंकि वे चुनाव लड़ने के लिए ज़रूरी धन और मानव संसाधन नहीं जुटा पाते |

* यह भी हो सकता है कि राजनीतिक दलों को लगे कि युवा उम्मीदवार जीत नहीं सकते हैं और वे उन्हें टिकट न दें |

* संभव है कि उन्हें अपने परिजनों और दोस्तों का समर्थन नहीं मिले, वे उन्हें चुनाव लड़ने से हतोत्साहित भी कर सकते हैं | इसकी जगह उन्हें अपनी पढ़ाई और करियर बनाने पर ध्यान देने को कहा जाता है |

?

क्या आपको लगता है कि अधिक से अधिक युवाओं को चुनाव लड़ना चाहिए? क्यों और क्यों नहीं? ऐसा क्या किया जा सकता है ताकि अधिक युवा चुनाव लड़ने को तैयार हों?

क्या आपके आसपास कोई ऐसा युवा है जिसने चुनाव लड़ा हो? उस चुनाव का क्या नतीजा निकला और उनका अनुभव कैसा था?

क्या आपने कभी चुनाव लड़ा है? आपका अनुभव कैसा था?

40 साल का होने से पहले क्या आप कभी चुनाव लड़ना चाहेंगे? हाँ तो क्यों और नहीं तो क्यों नहीं?

शब्दावली

निर्वाचन क्षेत्र:

एक ऐसा क्षेत्र जिसमें लोग अपने प्रतिनिधि को वोट देते हैं | सरकार के विभिन्न स्तरों पर विभिन्न प्रकार के निर्वाचन क्षेत्र हैं |

सार्वजनिक प्राधिकार:

कोई भी संस्था, कार्यालय या संस्थान जो सीधे सीधे या परोक्ष रूप से सरकार से जुड़ा हुआ हो या सरकारी धन से चलता हो |

प्राक-विधायी परामर्श नीति (पीएलसीपी)

यह विधेयकों या नियमों के मसौदों को संसद में पेश किए जाने, या सरकार द्वारा नोटिफाई किए जाने से पहले उन पर जनता और पक्षकारों की राय जानने की एक प्रकिया है |